dfcj lkxj

¼Kku lkxj½

सत्यसुकृत, आदि अदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग संतायन, धनी धर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रमोधगुरुबालापीरनाम, कमल-नाम, अमोलनाम, सुरतिसनेहीनाम, हक्कनाम, पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्र नाम, दयानामसाहबकी दया, वंश ब्यालीसकी दया.

अथ ज्ञानसागर प्रारम्भः

सोरठा—सत्यनाम है सार, बूझो संत विवेक करि ।
उतरो भव जल पार, सतगुरुको उपदेश यह ॥
सतगुरु दीनदयाल, सुमिरो मन चित एक करि ।
छेड़ सके नहिं काल, अगम शब्द प्रमाण इमि ॥
बंदौं गुरु पद कंज, बंदीछोर दयाल प्रभु ।
तुम चरणन मन रंज, देत दान जो मुक्ति फल ॥

चौपाई

मुक्ति भेद मैं कहौं विचारी । ता कहँ नहिं जानत संसारी ॥
बहु आनंद होत तिहि ठाऊँ । संशय रहित अमरपुर गाऊँ ॥

तहँवा रोग सोग नहिं होई। क्रीडा विनोद करे सब कोई ॥
चंद्र न सूर दिवस नहिं राती। वरण भेद नहिं जाति अजाती ॥
तहँवा जरा मरन नहिं होई। बहु आनंद करैं सब कोई ॥
पुष्प विमान सदा उजियारा। अमृत भोजन करत अहारा ॥
काया सुन्दर ताहि प्रमाना। उदित भये जनु षोडस भाना ॥
इतनौ एक हंस उजियारा। शोभित चिकुर तहां जनु तारा ॥
विमल बास तहँवां बिगसाई। योजन चार लौं बास उड़ाई ॥
सदा मनोहर क्षत्र सिर छाजा। बूझ न परै रंक औ राजा ॥
नहिं तहां काल वचनकी खानी। अमृत वचन बोल भल वानी ॥
आलस निद्रा नहीं प्रकासा। बहुत प्रेम सुख करैं विलासा ॥

साखी-अस सुख है हमरे घरे, कहै कवीर समुझाय।
सत्त शब्दको जानिके, असथिर बैठे जाय ॥

चौपाई

सुन धर्मनि मैं कहौं समुझाई। एक नाम खोजो चित लाई ॥
जिहिं सुमिरत जीव होय उबारा। जाते उतरौ भव जल पारा ॥
काल वीर बांका बड़ होई। बिना नाम बाचै नहिं कोई ॥
काल गरल है तिमिर अपारा। सुमिरत नाम होय उजियारा ॥
काल फांस डारै गल माहीं। नाम खड्ग काटत पल माहीं ॥
काल जँजाल है गरल स्वभाऊ। नाम सुधारस विषय बुझाऊ ॥
विषकी लहर मतो संसारा। नहिं कछु सूझे वार न पारा ॥
सुर नर माते नाम विहूना। औंट मुये ज्यों जल बिन मीना ॥
भूल परें पाखँड व्यवहारा। तीरथ वृत्त औ नेम अचारा ॥
सगुण जोग जुगति जो गावै। विना नाम मुक्ती नहिं पावै ॥

साखी-गुण तीनोंकी भक्तिमें, भूल परचो संसार।
कहँ कवीर निज नाम विन, कैसे उतरै पार ॥

धर्मदास वचन–चौपाई

विनऊँ स्वामी दोइ कर जोरी। कहौ गुसाईं नामकी डोरी ॥
निरंकार निरंजन नाऊं। जोत स्वरूप सुमरत सब ठाऊं ॥
गावहि विद्या वेद अनूपा। जगरचना कियो ज्योति सरूपा॥
भक्त वत्सल निजनाम कहाई। जिन यह रचि सृष्टि दुनियांई ॥
सोई पुरुष कि आहि निनारा। सो मोहिस्वामी कहौ व्यवहारा॥
जिहिंते होय जीवको काजा। सो मैं करहुँ छोड़ कुल लाजा ॥
होहु दयाल दयानिधि स्वामी। बोलहु वचन सुधा रस वानी ॥
नाम प्रभाव निज मोहि बताओ। होहु दयाल मम तृषा बुझाओ॥

साखी–जो कुछ मुझे सन्देह है, सो मोहि कहो समुझाय।
निश्चय कर गुरु मानिहौं, औ बंदो तुम पायँ ॥

साहिब कबीर वचन–चौपाई

तुमसों कहौं जो नाम विचारी। ज्योति नहीं वह पुरुष न नारी ॥
तीन लोक ते भिन्न पसारा। जगमग जोत जहाँ उजियारा ॥
सदा वसंत होत तिहि ठाऊं। संशय रहित अमरपुर गाऊं ॥
तहँवा जाय अटल सो होई। धरमराय आवत फिरि रोई ॥
वरनों लोक सुनो सत भाऊ। जाहि लोकतें हम चलि आऊ ॥
जगमग जोती बहुत सुहावन। दीप अनेक गिने को पावन ॥
जगमग ज्योति सदा उजियारा। करी अनेक गिने को पारा ॥

छंद

जहँ ज्योति जगमग अति सुहावन तत्त्व वारिध अति चलै।
ढहत दोई कुल तिमिर मनो पद्म झलहल हलै ॥
फेन उडगन बहन लागे शसि मनोहर हेरि को।
किमि देउँ पटतर बूझ देखो भाव नहिं वहां जोर को ॥

सोरठा–शोभा अगम अपार, वर्णत बनैं न एक मुख।
कही न जात विसतार, जो मुख होवै पदम सत ॥

धर्मदास वचन–चौपाई

हे स्वामी मोहि आदि सुनाओ । कैसे पुरुष वह लोक बनाओ ॥
कैसे द्वीप करी निर्मावा । होहु दयाल सो मोहि बतावा ॥

साहब कबीर वचन

सुन हंसा तोहे कहब विचारी । लोक द्वीप जिमि करी सम्हारी ॥
इते अदेह दुतिया नहिं काऊ । सुरति सनेही जान कछु भाऊ ॥
नहिं तहाँ पांच तत्त्व परकाशा । गुण तीनों न छिनहीं अकाशा ॥
नहिं तहाँ ज्योति निरंजन राया । नहिं तहँ दशौ जनम निर्माया ॥
नहिं तहँ ब्रह्मा विष्णु महेशा । आदि भवानी गवरि गनेशा ॥
नहिं तहँ जीव सीव कर मूला । नहिं अनंग जिहिंते सब फूला ॥
नहिं तहँ ऋषी सहस्र अठासी । षट दरशन न सिद्ध चौरासी ॥
सात वार पन्द्रह तिथि नाहीं । आदि अंत नहिं कालकी छाहीं ॥

छंद

नहिं कूर्म चक्रिय वारि पर्वत अग्नि वसुधा नाहिं हो ।
शून्य विशून्य न तहां होई अगाध महिमा सो कहो ॥
जिमि पुहुप तिमि छाया राखो बास भरो ता संग मई ।
स्वरूप बूझो अगम आदि महिमा अक्षर अंग मई ॥
सोरठा–प्रकट कहो जिमि रूप, देखो हृदय विचारिके ।
आदहि रूप स्वरूप, जिहिं ते सकल प्रकाश भयो ॥

चौपाई

तिनहिं भयो पुन गुप्त निवासा । स्वासा सार तें पुहुमि प्रकाशा ॥
सोई पुहुप विना नर नाला । ज्योति अनेक होत झल हाला ॥
पुहुप मनोहर सेतई भाऊ । पुहुप द्वीप सबही निर्माऊ ॥
अजे सरोवर कीन्हो सारा । अष्ट कमल ते आठौं वारा ॥
षोडश सुत तबही निर्मावा । कछू प्रगट कछु गुप्त प्रभावा ॥

पुहुप द्वीप किमि करब बखाना । आदि ब्रह्म तहँवा अस्थाना ॥
सत्रह संख पंखुरी राजै । नौ सौ संख द्वीप तहाँ छाजै ॥
तेरह संख सुरंग अपारा । तिहि नहिं जान काल बरियारा ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कहैं सुनो गुसाईं । द्वीप अनेक पुरुष के ठाईं ॥
सो स्वामी मोहि भेद बताओ । दया करो जनि मोहि दुराओ ॥
तुमसों वरनि कहौं सत भाऊं । मैं मनो आज महा निधि पाऊं ॥
सुनत वचन गदगद सिर मोरा । थकित भये जनु चंद्र चकोरा ॥
मैं भुजंग तुम मलया गीरा । करहु दया मम दुखित शरीरा ॥

साहिब कबीर वचन

धर्मदास पूछो जो मोहीं । सो मैं भेद कहौं सब तोहीं ॥
कमल असंख भेद कहँ जाना । तहँवा पुरुष रहे निर्वाना ॥
मोही सतगुरु दियो बताई । सो सब भेद कहौं तुम पाई ॥
सप्त पंखुरी कमल निवासा । तहँवा कीन्ह आप रहि वासा ॥

साखी–शीश दरस अति निर्मल, काया न दीसत कोश ।
पदम संपुट लग रहै, बानी विगसन होय ॥

चौपाई

प्रगट द्वार जब देखौ शीशा । धर्मनि हिये देखौ अहै ईशा ॥
पाइर द्वीप जहँ निर्मल ठौरा । सो सब भेद कहौं कछु औरा ॥
अंबू द्वीप हंस को थाना । पाइर द्वीप पुहुप निर्वाना ॥
नौ सौ करी ताहि के हीठा । गुरु प्रसाद सबै हम दीठा ॥
तहां आइ पुन पाइर द्वीपा । मंजुल मंगल करी समीपा ॥
तहँवा जाइ अटल सो होई । धर्मराज आवे फिर रोई ॥
द्वीप अनेक औ करी अनेका । पाइर द्वीप हंस के थेका ॥
चार करी हैं सब से सारा । बहु शोभा तहँ रूप अपारा ॥

साखी–करी भेद सुन हंसा, आइ देखु सत लोक।
गुरु जो बतावहीं, मिट जाई सब धोख॥

धर्मदास वचन–चौपाई

हे स्वामी मैं विनऊं तोही। कछु संशय जिव उपज्यो मोही॥
धर्मराय नहिं पायब दीपा। और सबै सुत द्वीप समीपा॥
कारण कौन दरस नहिं होई। कहौ अगम जनि राखो गोई॥

साहिब कबीर वचन

जो तुम पूछो अगम सन्देसा। सो सब तोहि कहौं उपदेसा॥
आदि पुरुष अस कीन्हो साजा। पाँच बुन्द हुलास उपराजा॥
बुन्दहि बुन्द अंड परकाशा। धर्म धीर जेहि अंड निवासा॥
अटल जोत सुरंग उजियारा। तहँवा अंड रहै मनियारा॥
धर्म धीर जबही उतपाना। आदि ब्रह्म तबही सकुचाना॥
एकहि मूल सबै उपजाई। मेटचो तेज अंड कुन्याई॥

साखी–तेज रह्यो जिहिं अंड मो, तेहिं नहिं दीन्हीं ठौर।
तेहिते उपज्यो धर्म अब, वंश अगिन के जोर॥

चौपाई

बावन लक्ष बेर अनुमाना। मेटो न मिटत शब्द परवाना॥
एकहि मूल सबै उपजाई। मिटै न अंड तेज अन्याई॥
धर्मराय है काल अँकूरा। उपजो तहाँ काल कौ मूरा॥
तबहि पुरुष अज जुगत विचारा। रहै धर्म द्वीप सो न्यारा॥
जोपै रहै सदा सिव काई। तौ एक द्वीप तुमहि निर्माई॥
पुरुष शब्द ते सबै उपराजा। सेवा करें सुत अति अनुरागा॥
जानें भेद न दूसर कोई। उत्पति सबकी बाहिर होई॥
अभिअन्तर जो उत्पति होई। काया दरश पाय सब कोई॥
काया दरश सुरति इक पावे। संगहि द्वीप सबै निर्मावे॥

धर्म धीर नहिं पावे द्वीपा । और सबे सुत द्वीप समीपा ॥
धर्मराय अस कीन्ह बनाई । कर सेवा तेहि जागहि आई ॥
सेवा बहुत भांति सों किएऊ । आदि पुरुष तब हर्षित भयेऊ ॥

साखी—सेवा कीन्ही धर्म बड़, दियो ठौर अब सोय ।
जाय रहो वहि द्वीप में, सेवा निर्फल न होय ॥

चौपाई

सात द्वीप कौ पायो राजू । भयो आनन्द धर्म मन गाजू ॥
सेवा करि पुन कीन्ह निहोरा । सुनो सहज तुम भ्राता मोरा ॥
सेवा बसहि द्वीप मैं पाएऊँ । कैसो रचो मोहि गम्य न आएऊँ ॥
पुरुष सों विनती करु यह भारी । हे भ्राता मैं तुम बलिहारी ॥
करिहौं सोई जो आज्ञा पाऊँ । कैसे मैं नव खंड बनाऊँ ॥
चले सहज जहँ द्वीप अमाना । कीन्ह जाय दण्डवत प्रणामा ॥
बहुविधि विनती सहज कियो जबही । बेग पुहुप बानी भई त ही ॥
पुरुष वाणी ते भया उजियारा । सुनहु सहज तुम वचन हमारा ॥
पक्षि पालना पाय है अंडा । सो लै धर्म रचैं नव खंडा ॥
चले सहज तब बार न लावा । धर्म धीरसौं मता सुनावा ॥

साखी—सुनत संदेशो पुरुष को, धर्म शीस तब नाव ।
पायो आज्ञा पुरुष की, अब फाबी मो दांव ॥

चौपाई

सुनत संदेश भयो हरषंता । आन अंड जो चले तुरंता ॥
देखो धर्म जब कूर्म शरीरा । बारह पालंग है बल वीरा ॥
नव पालंग धर्म परमाना । बनै न घात तब करे तिवाँना ॥
धावहि दशहू दिशा रिसाई । कैसे अंड लेऊं मैं जाई ॥
तबहि जुक्ति अस कीन्ह बनाई । तोरि शीस अस करचो उपाई ॥
शीस कीन्ह तब नख सौं छीना । अमी अंक तोरि कियो मीना ॥

शीस तोरि लियो द्वीप अपारा । तबहि धर्म भयो बरियारा ॥
पांचौ तत्त्व अंडसौं लीन्हा । गुन तीनौं सुशीस कर कीन्हा ॥
पांचौ तत्त्व तीन गुन सारा । यही धर्म सब कीन्ह पसारा ॥
तब कियो नीर निरंजन राया । मीन रूप तबही उपजाया ॥
करि चरित्र धर्म तब आया । आज सहज सों विनती लाया ॥

साखी–जाय कहौ तुम पुरुष सों, बहु सेवा मैं कीन्ह ।
सब सुत रहिहैं लोकमहँ, नव खंड हम कहँ दीन्ह ॥

चौपाई

इतने में नहिं मोर रहाऊँ । जहँवा रहव देव मोहि ठाऊँ ॥
चले सहज पुरुष पर जबहीं । विनती धर्म कीन्ह पुनि तबहीं ॥
मांग्यो बीज कीन्ह बड़ लोभा । जातैं द्वीप पावों मैं शोभा ॥
सहज विनय पुरुष सों कीन्हा । हे स्वामि तुव सुन बल हीना ॥
मांगै और ठौर पुनि सोई । धर्म धीर जो तुव सुत बल होई ॥
अति अधीन मांगै जो बीजे । सोहे द्वीप पुहुप वहि दीजे ॥
तबहि पुरुष सेवा वश भयऊ । अष्टांगी कामिनि सो दयऊ ॥
मान सरोवर ताकर नाऊँ । सोऊ दियो धर्म कहँ ठाऊँ ॥
अष्टांगी कन्या उत्पानी । जासौं कहिये आदि भवानी ॥
रूप अनूप शोभा अधिकाई । कन्या मान सरोवर आई ॥

साखी–चौरासी लक्ष जीव सब, मूल बीजके संग ।
ये सब मान सरोवरा, रच्यो धर्म बड रंग ॥

चौपाई

सहज संदेशो ल्याये जहँवा । धर्म धीर ठाढे हैं तहँवा ॥
कह्यो संदेश धर्म मन गाजा । मान सरोवर जाइ विराजा ॥

साखी–देखि रूप कामिनि कौ, पल भर रह्यो न जाइ ।
आगे पीछे ना सोचिया, ताकौ लीन्हेसि खाइ ॥

चौपाई

कन्या सों अस कीन्ह अन्याई । सहजसों लियो जो तुरत छुड़ाई ॥
यहै चरित पुरुष जब देखा । दीन्हें शाप सो कहौं विशेखा ॥
सवा लक्ष जीव करौ आहारा । तऊ न ऊदर भरै तुम्हारा ॥
सुमिरन कूर्म्म पुरुष को कीन्हा । अहहो पुरुष धरम सिर छीन्हा ॥
तुव आज्ञा मैं अंड जो दीन्हा । धर्मराज काहे सिर लीन्हा ॥
सुनत वचन प्रभु बहुत रिसाने । जोगजीत तबही उतपाने ॥
आज्ञा भई तुम बेग सिधारौ । धर्मराज कहँ मार निकारौ ॥
आज्ञा मांग चले तब ज्ञानी । धर्मराय सो बातैं ठानी ॥
अरे पापी तू पुरुष को चोरा । भागहु बेग कहा सुन मोरा ॥
सुनतहि क्रोध भये धर्म धीरा । जोग जीतके सन्मुख भीरा ॥
जोग जीत तबहीं फटकारा । जाय रहौ तब लोक ते न्यारा ॥
जोग संतायन चल भये जबही । धर्म धीर आयौ पुनि तबही ॥
बार अनेक युद्ध जिहि कीन्हा । मारे न मरत बहुत बल कीन्हा ॥

धर्मराज वचन

तब मैं हतौ पुरुष के ठाऊँ । तब नहिं सुन्यो तुम्हारौ नाऊँ ॥
को तुम हौ सो मोहि बताऊ । सहज भाव तुम फेर बनाऊ ॥

ज्ञानी वचन

धर्म धीर सों कहा बखानी । मर्दन धर्म नाम मम ज्ञानी ॥
जब तुम कीन्ह चार का काजा । तातें पुरुष मोहि उपराजा ॥
मारहुँ तोहि कहौ सतभाऊ । अष्टांगी तैं कामिन खाऊ ॥
सुनतहि क्रोध धरम पर जरेऊ । जरत हुताश मनहु घृत परेऊ ॥

साखी—करहिं युद्ध बहु भांति सों, कैसेहु क्षमा न होय ।
क्षण एक लरचौ सहज तुम, करु उपाय अब सोय ॥

चौपाई

पुरुष आज्ञा अस भयउ अपारा । मारहु धर्म के मांझ कपारा ॥
आज्ञा पुरुष ज्ञानी दियो जबही । मारौ शीश परो खस तबही ॥
संशय भयो तासु की देहा । ताकहँ भयो जी महँ संदेहा ॥
धर्म धीर कौ रुधिरसे जबही । विषम सरोवर उपजौ तबही ॥
कन्या निकस जो बाहिर आई । संशय काल तिहिं घटहि समाई॥
शीश दियो लै कुर्म्म के पासा । पुरुष आज्ञा सौं कीन्ह निवासा॥
आज्ञा कीन्ही बेग निकारहु । कहे जोइ अब धर्म सिधारहु ॥
छाड़हु अंश खंड का गाऊ । विषम सरोवर माहि सा जाऊ ॥
देखो बहुत रूप उजियारा । अस कामिनि तैं कीन्ह अहारा ॥
फिर मैं गयो पुरुष के पासा । धर्म धीर अस करहि तमाशा ॥
कह कामिनि सुन पुरुष पुराना । मैं अपना कछु मरम न जाना ॥
कौन पुरुष मोही उपजाई । सो मोहि गम्य कहौ समुझाई ॥

धर्मराय वचन

कन्या मैं उपजायो तोही । रहौ अलख नहिं भेंटसि मोही ॥
कन्या कह सुन पिता हमारा । खोजो वर होय व्याह हमारा ॥
वर खोजौं जो दुतिया होई । कन्या मैं अब व्याहौं तोही ॥
पुत्री पिता न होवत व्याहा । पितहि पाय बहुतै औगाहा ॥

साखी—धर्म कहै सुन कन्या, भर्म भयो मति तोहि ॥
पाप पुण्य हमरे घेरै, क्या डहकस तैं मोहि ॥

चौपाई

आदि भवानी और धर्मराऊ । इन सब कीन्ह सृष्टि निर्माऊ ॥
पांच तत्त्व तीन गुण रहेऊ । बीज सहित अष्टांगी दएऊ ॥
चौरासी लक्ष जीव दियो सम्हारी । रचहु सृष्टि अब आदि कुवांरी ॥
सेवा करहु सृष्टिकी ओरा । अलख निरंजन नाम है मोरा ॥

छन्द

कहैं भवानी सुनहु निरंजन यह मन्त्र निज सोई भले।
अस करहु कुलफ कपाट दै सब जीव जाहितैं ना चले॥
दस चार सुत दीजे भयंकर जिहि तैं होय त्रास हो।
तिहु लोक होत झटा पटा अब चार जुगन निवास हो॥
सोरठा—चौदह वीर अपार, चित्रगुप्त दुर्गदानी सम।
आन देई अहार, सवा लक्ष जिव रात दिन॥

चौपाई

जस कछु मत कियौ आदि भवानी। धरमराय ऐसी मति ठानी॥
जाइ रहौ जहाँ पांजी बाँका। धरती शीस सरग का नाका॥
दशौं दिशा रूँधे सब ठाऊँ। है द्वार मैं कहि समुझाऊँ॥
गुरु जो कहै औ पन्थ बतावे। ओहि पन्थ हंस घर आवे॥
धर्मराय मूदो वह द्वारा। तबहि भवानी युक्ति विचारा॥
तीनौं गुण तिय अण्ड सम्हारा। पुनि भाखौ आगिल व्यवहारा॥
नाम कहौं कह राखौं गोई। रजगुन तमगुन सतगुन होई॥
अष्टांगी अण्डन मन दीन्हां। धरमराय कछु उद्यम कीन्हां॥
मीन रूप जो प्रथम सुभाऊ। ता पीछे कूर्महि निर्माऊ॥
ता पीछे बाराह को थाना। ता पर उग्र कीन्ह उतपाना॥

छन्द

अस कीन्ह सबहि निरंजना तब दीन्ह मही को थेग हो॥
महीतल दीन्हा मीन कच्छप सूकर दीन्हा शेष हो॥
सुम्मेर पर्वत अति धुरंधर दीन्ह मही जो नाचलै॥
दशौं दिशा दिग्गज चार दीन्हैं जिहितैं मही ना डग मगै॥
सोरठा—दीन्हौं महि कौ भार, वारी जगत लगायकै।
जाकौ तमहि अपार, चतुर विधाता ठग भये॥

धर्मदास वचन–चौपाई

धर्मदास टेके गहि पाऊ । नाम जमन कौ मोहि सुनाऊ ॥
चौदह यम मोहि वरनी सुनाओ। दया करहु जिन मोहि दुरावो॥

साहेब कबीर दास

दुर्ग दाँनी चित्रगुप्त वरियारा । एता जमन के हैं सरदारा ॥
मनसा मंछ अपरबल मोहा । काल सैन मकरंदी मोहा ॥
चित चञ्चल औ अन्ध अचेता । मृत्यू अन्ध जतन जो खेता ॥
सूरा संख और कर्म रेखा । भावी तेज तालुका पेखा ॥
अग्नि औ क्रोधित कहिये अन्धा । जामें जीव जन्तु सब बन्धा ॥
परमेश्वर अपबल धर्मराया । पाप पुण्य सबसों बिलछाया॥
ये सब जम जो निरंजन कीन्हा । लिखना कागज रचके दीन्हा॥

छन्द

चित्रगुप्त लेखौ लगवौं बंधु दोइ चतुर भल ।
लख चौरासी रसन जाकै लखि लावत कै छलै ॥
लेखा लगावत जीव को जब अवधि पूजे आइ हो ।
सवा लक्ष प्रमाण बांध्यो ठग निरंजन राइ हो ॥

सोरठा–ऐसा कीन्ह विचार, वारी जगत लगाय कै ।
भूल परो संसार, एक नाम जांने विना ॥

चौपाई

देख भयंकर जम की काया । चौरासी लक्ष जिव डरपाया ॥
विकट रूप देखत जम पासा । सब जीवन भये जो बहु त्रासा॥
सब मिलि कै तब स्तुति ठाना । सुमरण एकहि आद प्रवाना ॥
यहि विधि विनती हसन ठानी । तबहि भई धर अधर तैं वानी॥
वानी विगसत भये उजियारा । जोग संतायन तब पगुधारा ॥
आज्ञा कहा पुरुष मोहे कीजे । करब सोई जो आयसु दीजे ॥

पुरुष वचन

हंस दुखित भये काल के पासा । जाइ छुड़ावहु कालकी फाँसा ॥
कहा करो जो हारो बोला । बरवस करब तौ सुकृत डोला॥
जोग जीत तुम बेग सिधारो । भव सागर ते हंस उबारो ॥

ज्ञानीवचन

चले ज्ञानी तब मस्तक नाई । पहुँचे तहँ जहँ धरम रहाई ॥
धर्मराय ज्ञानी कहँ देखा । क्रोध भयो जनु पावक रेखा ॥
यहँवा आये किहिं व्यवहारा । लोकहि से मोहि मारि निकारा॥
मानेव आज्ञा छांड़िब लोका । यही जान परे तुम धोखा ॥
करो संहार सहित तोहे ज्ञानी । मरम हमार तुम कछू न जानी॥
साखी--संहार करौ पल भीतर, कहौं वचन परचार ॥
पेलौ मान सरोवरै, विध्वंसौ द्वीप सब झार ॥

चौपाई

ज्ञानी कहँ सुन धर्मनि आगर । तो कह ठौर दीन्ह भवसागर ॥
तीनौ पुर दीन्हौं तोहि राऊ । पुरुष आज्ञा आयो धरि पांऊ॥
चौरासी लक्ष जीव तोहि दीन्हा । तैं जीवन बड़ सासत कीन्हा ॥
आज्ञा पुरुष करौ परवाना । जीव लोक सब करौ पयाना ॥
पुरुष वचन मेटे फल पावहु । कियो अवज्ञा लोकसे आवहु॥
सोइ करहु रहन जो पावहु । की यहवाँ तैं वेग सिधावहु ॥
कै जीवन कहँ दीजे बांटा । बोलहु वचन धर्म तुम छांटा ॥
साखी--धरम कहैं सुन ज्ञानी, आज्ञा पुरुष की सार ॥
सेवा करत रैन दिन, पल पल सहित विचार ॥

चौपाई

आज्ञा मान लीन्ह मैं तोरा । अब सुनिये कछु विनती मोरा॥
सो ना करब जो मोर विगारा । मांगौं वचन करौ प्रतिपारा ॥
पुरुष दीन्ह मोहे राज बुलाई । तुमहीं देव जो संशय जाई ॥

लीजे हंस जो भक्त परमाना। तीनों जुग हैं मेरे थाना॥
चौथा जुग तबही उत्पानी। तबहि सम्हार सुनौ हो ज्ञानी॥
कैसे सम्हारो मोही समझावहु। की भक्ति जो मोहि सुनावहु॥
कहैं धर्म सुन जोग संतायन। ऐसे हंस न होय मुक्तायन॥
हरि मन्दर मैं रचौ बनाई। तहँवा हंस करत मम नाई॥
जो कोई गम्य न करै विचारा। सात जन्म लौं चोर हमारा॥
सुन ज्ञानी विहँसित मन कीन्हा। कैसा हरि मंदिर का चीन्हा॥

धर्मरायवचन

जब मम कन्या भयो प्रसंगा। मनमथ उपज्यौ भयौ उमंगा॥
चल्यौ रुधिर कामिन केजबही। नख रेखा भग उपजी तबही॥
चल्यौ रुधिर ताको रज भएऊ। गर्भ प्रसंग अंड तिय ठएऊ॥
तेहि प्रसंग तिय गुण उपराजा। तबतै अधर निरञ्जन राजा॥

साखी--ज्ञानी कहैं धर्म सो, छल मतौ तुम्हाँर॥
जाको मैं चेतावहूं, सो तुमहीं सो न्यार॥

चौपाई

विनती तोर करों प्रतिपाला। जुग तीनों जीवन वर साला॥
चौथा जुग अंश मम आवहि। नाम प्रताप हंस मुक्तावहि॥

धर्मरायवचन

हे स्वामी वर आयसु होई। कछु मांगों अब दीजे सोई॥
सो न करब जो सब जिव जाई। भवसागर खाली परजाई॥
ऐसा मत ज्ञानी तुम ठाँनहु। आज्ञा पुरुष की तुमहू मानहु॥
पुरुष बोल हारा मोहि पाहीं। सो न करब जो सब जिय जाहीं॥
कह ज्ञानी सब मैं मानी। कह्यौ वचन सो करब प्रमानी॥
सतजुग त्रेता द्वापर जाई। कलियुग कौ प्रभाव जब आई॥
चार अंश मैं कीन्हौ थाना। खूंट गहौ तो नहीं प्रमाना॥

धर्मरायवचन

साखी--बाँवन नरसिंह अंश मम, परसराम बलबीर ॥
रामचन्द्र आगे करौ, तब पुनि कृष्ण शरीर ॥

चौपाई

कृष्ण देह छाँडव मैं जहियाँ । कलियुग चौथा युग होय तहियाँ ॥
तब हम करिहैं बौद्ध शरीरा । जगन्नाथ सरोवर के तीरा ॥
राजा इंद्र दवन परवाँना । मंडप काम लगावैं तवाँना ॥
मंडप तास उठन नहिं पाई । सायर उमंग खसावन आई ॥
तब ज्ञानी पूछैं यह बाता । तोहि ते उपजै सायर साता ॥
जगन्नाथ तै कष्ट बनाई । सायर कवनहु भाँति खसाई ॥
हँस्यो धर्म कहि सतौ अपाना । कहौ करतूत सुनौ परिवाना ॥
दैत्य अनेक जीव जो मारौं । अंश मोर तेहि जाय सँहारौं ॥
राम रूप जब होय हमारा । तिनसौं होइ है द्रोह अपकारा ॥
दैत्य अनेक जीव को फेरा । वालि वधे औ सायर तेरा ॥
वालि बैर मैं तुरत दिवायव । व्याधि फाँसी सो कृष्ण मरायव ॥

साखी--सायर बैर ना पावई, करि है वाऊ सौं घात ॥
मंडप उठन न पाइ है, जातैं कहो अस बात ॥

चौपाई

हे ज्ञानी अस मतौ विचारहु । प्रथमहि सागर तीर सुधारहु ॥
मोहिं थापहु मैं करहुँ निहोरा । तातें भाव जरै नहिं मोरा ॥
मण्डप उठे अटल हो राजू । पुरुष वचन कहँ तुम कहँ लाजू ॥
पहिले थापहु मो कहँ ज्ञानी । सागर तीर बैठहु अन्तर्यामी ॥
कहै जोग जीत सुनो धर्मराई । पुरुष बोल मेटा नहिं जाई ॥
सतजुग त्रेता द्वापर माहीं । तीनौं जुग अंश मोर जहँ जाहीं ॥
कोई कुल हंस शब्द जो पावई । तीनौ जुग जीव थोरा आवई ॥
कलियुग मोर मनुष्य शरीरा । जा कहँ सुनियों नाम कबीरा ॥

जो जिव नाम शरण गति आवै। होय निशंक लोक कहँ जावै॥
और इकोतर नामहि पावै। तुम कह जीत हंस घर आवै॥
माँग्यो वचन करौं प्रतिपाला। जुग तीनों जीवन वरशाला॥
जातें पुरुष वचन अब हारा। करौ सो वचनन कौ प्रतिपारा॥

साखी--जगन्नाथ मैं थांपब, जायब सागर तीर॥
हंस लोक लै आएब, देह जब धरब कबीर॥

चौपाई

यहि प्रकार आयो ज्ञानी जबहीं। मार्‍यो तुरत बांधके तबहीं॥
कियो अवज्ञा गरस्यो नारी। मान सरोवर तै मार निकारी॥

धर्मराय वचन

हे स्वामी मैं कहौं विचारी। रोकौ न हंस जो शरन तुम्हारी॥
जो कोई जीव जो होय तुम्हारा। अपने कांध उतारौं पारा॥

साखी—यह चरित्र सब ज्ञानी, कीन्ह धरम के पास॥
जाय कह्यो तब पुरुष सौं, सुख साखर कीन्ह निवास॥

चौपाई

अभैपक्ष ज्ञानकी कौ द्वीपा। तहाँ सत्ताईस द्वीप समीपा॥
तहँकी काल खबर नहिं पाई। तहँ न सतावै काल अन्याई॥

धर्मदास वचन

धरमदास तब कीन्ह प्रमाना। अगम अपार सुनै यह ज्ञाना॥
हे स्वामी यह कहौ बुझाई। कौन मते अब सृष्टि बनाई॥
सो विरतंत कहौ समुझाई। जिहिं ते मन की संशय जाई॥
तुम्हरे वचन मोहि सार गुसाईं। सुन हर्षब धन रंक की नाई॥

साहेब कबीर वचन

कहै कबीर सुनौ धर्मदासा। जब कन्या कछु कीन्ह तमासा॥
तीनौं अण्ड भये तिय वारा। ताके रूप भये अधिकारा॥

रजगुन भाव ब्रह्मा उतपानी । सतगुन भाव विष्णु को जानी॥
तमगुन भाव रूद्र का लेखा । तीनों गुन तिय अंड विशेषा ॥
जब देवी तिन सुत उतपानै । धरमराय निद्रा अलसानै ॥
सोवत चार युग गय बीती । इक युग प्रथम अंड सौ प्रीती ॥
उठि जागै कोइ जान न भेदा । ताकी स्वांस तैं चारौं वेदा ॥
स्तुति वेद कियो पुनि तहँवा । चतुर रूप विधाता जहँवा ॥
मीन रूप जो कीन्ह बनाई । तीन छोड़ि रह चौथे ठाई ॥
जो तुम संशय करहु धर्मदासा । वेद चरित्र अब कहौं प्रकाशा ॥
कूर्म्म घाव कियौ काल अन्याई । बुंद प्रसेद तहाँ पुनि पाई ॥
एक बुंद धरती परगासा । दूसरा बुन्द घट माहीं निवासा॥
बुँद प्रभाव वेद भये ताही । ऐसे बुन्द की उतपति आही ॥
और चरित्र जस कीन्ह भवानी। सो अब तुमसौं कहा बखानी ॥

साखी-तीन देव जब ऊपजे, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥
कर जोरे स्तुति करें, तैं अब कहौ संदेश ॥
आज्ञा कह मोहि माता, सोइ कहौ समुझाइ ॥
सोई करब हम निहचै, बोले तीनौ राइ ॥

ब्रह्मा करहु तुम सृष्टि उरेहा । जात जीव धरैं सब देहा ॥
कैसे करहि सो युक्ति बतावहु । क्रिया करहु जनि मोहि दुरावहु॥
सतगुन पहिले भयो उतपानी । तैंतिस कोटी देव बखानी ॥
रजगुन तमगुन अंड जो भयऊ। दैत्य अनेक तबहि निरमयऊ ॥
दैत्य देव सों होय संग्रामा । जो मैं कहौ करब सो कामा ॥
जाय खनावहु सागर साता । जातैं दैत्य न करैं उतपाता ॥
सागर नीर करौ उतपानी । जाते दैत्य गति रहै भुलानी ॥
रचौ सिन्धु जल होय अपारा । तब कहि हौं आगिल व्यौहारा॥

चल्यो ब्रह्मा मातहिं सिरनाई । सोच रह्यो कस करब उपाई ॥
बहुतक जने परिश्रम कीन्हा । चलो प्रस्वेद सोइ पशु चीन्हा॥
साठ सहस्र बुन्द अनुसारी । बुन्द प्रभाव सबै नख धारी ॥
नख धारिन स्तुति अनुसारा । कहा करैं सुन पिता हमारा ॥

ब्रह्मा वचन

साखी--खनहु सिन्धु मम वचन इम, मन्त्र कहौं समुझाय ॥
माटी उठे जु खनत महँ, ता कह घालिब खाय ॥

चौपाई

चतुर रूप कीन्हा तिन चारी । कहौं नार सबते अधिकारी ॥
रचा सिन्धु कछु लागि न बारा । सागर सात रच्यो विस्तारा ॥
सागर नीर जब भयो प्रकाशा । नख धारिन तब काल गरासा ॥
सागर रचि ब्रह्मा अनुरागा । अडसठ तीरथ रचन तब लागा॥

साखी-गङ्गा यमुना सरस्वती, गोदावरी समान ॥
रची नदी तब गंडकी, जहँ तहँ शिल उत पान ॥

चौपाई

सालिग्राम गंडक अंकूला । पांहन पूजत पंडित भूला ॥
और नर्मदा नदी गोदावरी । सोनभद्र पुनि करमनासावरी॥
और अनेक रच्यो विस्तारा । जाते भूल परचो संसारा ॥
सिन्धु सम्हार गये देवी ठाऊं । चतुर मुख आन गहे तब पाऊं॥
हे माता आज्ञा तुम मानी । रच्यो सिंधु तुव वचन प्रवानी ॥

भावानी वचन

मथौ सिन्धु सुत कहा हमारा । वहि में पैहौ कामिनि वारा ॥
तीनों जनैं चले सिर नाई । मथन सिन्धु कस करब उपाई॥
पर्वत आनि मथनियां कीन्हा । फनपति लेह फाहरी दीन्हा ॥
मथतहि सिन्धु मतो अस कान्हा। आपन अँश उतपानहिं लीन्हा॥

अंश बारि महँ पाये जबहीं । कन्या तीन उत्पन्न भई तबहीं ॥
पाय कन्या तब भये आनन्दा । देवी पास चले तिय संगा ॥
लै कन्या तब आगे कीन्हा । कर जोरें प्रणाम मन दीन्हा ॥
साखी–हे माता यह कन्या, पायो सिन्धु मझार ॥
जस कछु आज्ञा कीजिये, तस कछु करब विचार ॥

भवानी वचन चौपाई

कहे भवानि सुन ब्रह्म कुवाँरा । कामिन के तुम सदा भरतारा ॥
सावित्री ब्रह्मा कहँ दीन्हा । लक्ष्मी कृपा विष्णु पर कीन्हा ॥
पारवती रहि संकर पांहीं ।अटल अहिबात करचो भवमाहीं ॥
पायो कामिनि भयौ हुलासा । बहुरि विनय कियो देवी पासा ॥
हे माता तुव आज्ञा सारा । जो कछु कहौ सो करौ विचारा ॥
कहे भवानी सुन ब्रह्म कुवाँरा । जाइ मथो अब सागर खारा ॥
पइहौ वस्तु सो आनहु जानी । अस कछु बोली आदि भवानी ॥
चले देव त्रिय लाग न वारा । मथ्यो सिन्धु करि हर्ष अपारा ॥
पाये वेद ब्रह्मा सो लीन्हा । विष्णु भाव सो हमहू चीन्हा ॥
साखी–चार वेद ब्रह्मा लिया, अमृत विष्णु सम्हार ॥
मथे अनिल जो विष भया, सो लीन्हा त्रिपुरार ॥

चौपाई

यह चरित्र त्रय देव बनाया । यहि सुधि दैत्य सुनै जब पाया ॥
आइ कीन्ह सब बाद विवादा । पायहु वस्तु देहु मोहिं आधा ॥
वेद अनिल विष सब तुम लेहू । सुधा आहि सो हम कहँ देहू ॥
कहैं विष्णु सुन दैत्य अधीरा । सदा खाइकर विपति शरीरा ॥
दोनों मिल अस कीन्ह विचारा । सब मिल खईये अमृत सारा ॥
दोई पांति बैठे भल जोरी । दैत्य देव तैंतीस करोरी ॥
विष्णु चरित काहू नहिं जाना । बाँटत अमृत छल जो ठाना ॥

साखी-देवन अमृत पानयौ, काहु न कीन्ह प्रसाद ॥
बांटत राहू तब ग्रस्यो, चन्द्र भानु कियो बाद ॥

चौपाई

जब सब मिलिकै आयसु पाई । सभा बैठ कैसे कै खाई ॥
सुनकै विष्णु क्रोध तब कीन्हा । चक्र मार राहु सिर छीना ॥
अमृत परचो ताहि के पेटा । शीश के राहु देह सो केता ॥
भयो युद्ध दोनों दल भारी । बहुत दिन लरे जो बैर सम्हारी ॥
चन्द्र भानु जो राहु मुरावा । ग्रासै जान बैर को भावा ॥
यह चरित भयो सागर तीरा । देवी पास चले त्रय वीरा ॥
तब देवी अस मतौ विचारा । रचहुं सृष्टि जग होइ उजियारा ॥
अंडज माता किया उतपानी । पिंडज भाव ब्रह्मा को जानी ॥
उष्मज विष्णु कीन्ह व्यवहारा । शिव कीन्हौ रोम अठासी धारा ॥
लख चौरासी योनिन कीन्हा । आधा जल आधा थल दीन्हा ॥

साखी-जलके जीव पताल सब, औ पृथ्वी परचंड ॥
रचो अहार शंभू सबै, वनस्पती को अंग ॥

चौपाई

स्थावर महेश जो कीन्हा । उष्मज दोइ तत्त्व कर चीन्हा ॥
तीन तत्त्व अंडज मैं दीन्हा । चार तत्त्व पिंडज को कीन्हा ॥
मुक्ति क्षेत्र नर कौ अवतारा । ता महँ पांच तत्त्व हैं सारा ॥
और जो इन में बरतै भाऊ । मनुष्य जन्म में प्रगट स्वभाऊ ॥
मनुष्य जन्म उत्तम सो होई । विना नाम पुनि जाइ बिगोई ॥
स्वासा सार तै वेद जो भएऊ । सो पुनि मीन पास लै धरेऊ ॥
एकहि सुरति तब ब्रह्मा पावा । तेहि पढिबे का मन चितलावा ॥
वेद पढ़त बूझ अस परेऊ । पृथ्वी आकाश जोत अनुसरेऊ ॥

साखी-निराकार निरंजन, सृष्टि कीन्ह उतपान ॥
मैं जानौं भल मरम अब, नहिं कीन्ह्यो आदि भवान ॥

चौपाई

चले ब्रह्मा माता पर आये । दोई कर जोरिकै विनती लाये॥
हे माता मैं पूछौं तोहीं । जो पूछौं सो कहिये मोहीं ॥
कौन पुरुष मुहि कीन्ह प्रकाशा । सो सब मातु कहौमोहि पासा॥
कहे भवानि सुनु ब्रह्म कुवाँरा । पृथ्वी अकाश मैं अनुसारा ॥
मैं कीन्हा दुतिया नहिं कोऊ । तुम कस भूले सो कहु भेऊ ॥
हे माता मैं वेद विचारा । है कोई शून्यमें सिरजन हारा॥
निरंकार निरञ्जन राया । ज्योतिअपार श्रुति गुणगाया॥
साधु साधु कहि आदि भवानी । आदि पुरुष जेहि तैं उत्पानी ॥
कहां अहै सो मोहि बताओ । कृपा करो जिन मोहि दुराओ॥

साखी—चरण सप्त पाताल हैं, सात स्वर्ग हैं माथ ॥
पुहुप लैकर परसौ, जामें होहु सनाथ ॥

चौपाई

चले ब्रह्म मातहि शिर नाई । उत्तर पन्थ सुमेरुहि जाई ॥
जाइ ठाढ भये तिहिं अस्थाना ।शून्य आद जहाँ शशि नहिं भाना॥
बहु विधि स्तुति ब्रह्मा करई । ज्योति प्रभाव ध्यानअस धरई॥
दुखित सुर्त जो भई तुम्हारी । स्तुति करत भये जुग चारी ॥
यहु विधि बहुत दिवस चलि गएऊ। आदि भवानी मन चित ठएऊ॥
जेठा पुत्र जो ब्रह्म कुवाँरा । कहाँ गयो वह पुत्र हमारा ॥

साखी—अब मैं करब उपाय सो, जिहिं तैं ब्रह्मा आय ॥
गायत्री उतपानऊ, ताहि कही समुझाय ॥

चौपाई

ब्रह्मा गये पिता के ठांइं । पिता दरश अजहूँ नहिं पाई ॥
बहुत दिवस भये बेग लै आवहु ।बहुत भांतिकर तिहि समुझावहु॥
चली गायत्री ब्रह्मा पासा । तिनसौं जाइकर वचनप्रकाशा॥

पुहुप लेकर दरशन आएहु । पिता दरश अजहूं नहिं पाएहु ॥
ब्रह्मा कहै कवन तैं आही । मोर मरम पाये किहिं पाही ॥

दर्शन

आदि भवानी मोहि उपजाई । तुमहि लैन को यहां पठाई ॥
चलहु बेगि जिन लावहु बारा। तुम विन सृष्टि न हो अनुसारा॥
कहे ब्रह्मा कैसे मैं जाऊँ । पिता दरश अजहूं नहिं पाऊँ ॥
एक उपाय चलौ सुनु बाता । तौ कहँ बात पूछिहै माता ॥
मोरे हित कह झूठ स्वभाऊ । तौ तुव संग अब धारौं पाऊ ॥
गायत्री कहँ आयसु होई । पुन परमारथ है बड सोई ॥

चौपाई

साखी-चलु ब्रह्मा माता पर, होवै सृष्टि उपाय ॥
झूठ वचन मैं भाषिकै, जाय सुनाइब माय ॥

चलि गायत्री ब्रह्मा साथा । माता प्रेम सौं चूम्यौ माथा ॥
कुशल प्रभाव सौं चूम्यो शीसा। और मातु दियो बहुत अशीशा॥
कैसो भयो तहां तोहि भाऊ । सो सब ब्रह्मा मोहि सुनाऊ ॥
ब्रह्मा कहै सुनौ हो माता । यह पूछौं गायत्री बाता ॥
गायत्रिहि आज्ञा भई जबही । अचरज बात कही कछु तबही॥
परस पुहुप लै पितु ही माथा। देखो सबै रही मैं साथा ॥
आदि भवानी बहुत बिहँसानी। दोई झूठ कही सहिदानी ॥
ज्येष्ठ पुत्र मम ब्रह्म कुँवारा । बहुत झूठ तिन वचन उचारा ॥
ब्रह्महि शाप दियो तब जानी । होहु अपूज्य कहि आदि भवानी ॥
औ कमल केतकी अस अविश्वासा। निरघिन ठौर तोर होइ बासा॥
गायत्री होई वृद्ध भरतारा । पांच सात औ बहुत पसारा ॥

साखी-शाप्यो ब्रह्मा गायत्री, फिर पाछे पछताय ॥
क्रोध क्षमा नहिं कीन्हेऊ अब कस करे निरञ्जन राय॥

चौपाई

ततक्षण भई अकाश तैं वानी । नहिं भलकीन्हौं आदि भवानी॥
ऊँचे होइ जो नीच सतावै । ताकर बैर मोहि सन पावै ॥
लेहुँ बैर सुन कहा हमारा । तोरे होइ हैं पञ्च भर्तारा ॥
सतयुग त्रेतायुग जैहैं जबही । द्वापर को प्रभाव होय तबही ॥
राजा द्रुपद घर तो अवतारा । द्रौपदी नाम तोर उजियारा ॥
पांडव होई हैं कंत तुम्हारा । निश्चय मानहु कहा हमारा ॥
शाप बैर देवी जब पावा । सोच करै मनमें पछतावा ॥

साखी-सोच करा कह अब मैं, दुर्ग निरंजन राइ ॥
आइ परी बस अधम के, विष्णुहि देखौ जाइ ॥

चौपाई

सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा । बेर गमन कर सप्त पताला ॥
जाय पिता कर परहू पाऊँ ।सो सब विष्णु तोहि समुझाऊँ॥
अच्छत पूजा लियो कर जोरी । पताल पंथ की अगम है डोरी॥
चलत जात कछु अंत न पावा । शेष नाग विष गरल स्वभावा॥
विष के तेज विष्णु कुम्हलाना । येहि चरित्र निरंजन जाना ॥
स्वान शरीर भय विष के ज्वाला । भइ अकाशवानी तत काला ॥
सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा । विषम पंथ है सप्त पतारा ॥
प्रथम पतालको है अस ज्वाला। आगे होइ तोर जिव काला ॥

साखी-फिरचो विष्णु परमान इमि, कह जो दियो समुझाय॥
मध्य पंथ है दारुन, कैसे परसौ पाय ॥

चौपाई

गरल भाव उर स्यामल अंगा । ताकर बैर कहौ परसंगा ॥
जो को करै जीव वरियाई । दुर्ग राइ तिहि बैर दिवाई ॥
सतयुग त्रेता गत हो जबहा । द्वापर को प्रभाव हो तबही ॥

विष्णु भाव पुनि कृष्ण शरीरा। नाथहि काल कालिन्दी तीरा ॥
जो कुछ विष्णु पातालहि सुना। देवी पास कहौ सतगुना ॥
सुनकर देवी विहँसत भएऊ। विष्णु अशीश बहुत के दिएऊ ॥
सत्य वचन तें भयौ हुलसा। लेउ अशीश विष्णु मोहि पासा ॥
जहँ लग जीव जंतु उतपानी। सब पर विष्णु तुमहि परमानी ॥
तीनों पुर में आन तुम्हारी। वचन मोर सुनु सत्य मुरारी ॥

साखी-यह चरित्र कर देवी, चलि जो शिव के पास ॥
कर जोरे स्तुति करै, कीन्हौं बहुत हुलास ॥

चौपाई

दोइ पुत्र को मतौ सुनावा। मांगु महादेव तुम मन भावा ॥
मांगौ सो जो कीजो दाया। यह नहिं बिनसै हमरी काया ॥
वैसे होहु सुनो हो वारा। साधौ जोग जो मतौ अपारा ॥
जब लग पृथ्वी अकाश पतारा। तब लग काया न बिनसै तुम्हारा ॥
ब्रह्मा विष्णु तजैं शरीरा। तैंतिस कोट देव रनधीरा ॥
जब लग चन्द्र सूर्य औतारा। बिनसैं न देह सुनु कहा हमारा ॥
तीनों पुत्र को कीन्ह सन्माना। तब माता अस आज्ञा ठाना ॥
रचौ सृष्टि तुम तीनों भाई। प्रथमहि कैसे युक्ति बनाई ॥
नर नारी कीन्हो दोइ देहा। तातें उपज्यो मदन सनेहा ॥
दश द्वारा सुर नर मुनि कीन्हा। धरती भार भए अकुलीन्हा ॥

साखी-दशौं दिशा तब निरमयो, भयो मनुष्य अपार ॥
पृथ्वी भई तब व्याकुल, सहि न सकै अस भार ॥

चौपाई

गौ रूप हो वसुधा गयऊ। विष्णु स्थान ठाढ पुनि भयऊ ॥
हे स्वामी भयो मनुष्य अपारा। मोर अंग बलसहि न सम्हारा ॥
चलत पंथ नहिं भूमि अडाही। माथे पर लै हाथ चढाही ॥
सुनकै विष्णु समाध लगावा। निरंकार सौं अस्तुति लावा ॥

अहो पुरुष का करब उपाई। पृथ्वी भार बहुत अकुलाई ॥
ततक्षण भई अकाश ते वाणी। सुनहु विष्णु कर सबकी हानी॥
शिव विहाय चौदह सुत मोरा। इनैं छांडकर शंकर ओरा ॥
साखी–जाहु पृथ्वी घर अपने, करौं चरित अब सोय ॥
भार उतारो मही को, आज्ञा अस जो होय ॥

चौपाई

चली आय वसुधा निज गेहा। जमन विष्णु तब कीन्ह सनेहा॥
मारहु जारहु अब जिव जन्तू। सुन अन्तक सुन भयो अनंतू॥
आई पावक तब रखना लीन्हा। सबजिव मार विष्णु कह दीन्हा॥
मारे देव तैंतीस करोरी। ब्रह्मा मार मही सब घोरी ॥
कीन्हो युग निकंद भयो जबही। जुग निकंद विष्णु कियौ तबही॥
सब जीव घाल आप में लीन्हा। प्रथम स्वभाव जमन तब कीन्हा॥
साखी–सवा लक्ष जीव विष्णु ते, चले जात नित नेम ॥
जस अनाज की कोठरी, करि कृषानु बहु प्रेम ॥

चौपाई

ले अनाज कोठी वहरावै। खरच लेइ पुन फेर मुदावै ॥
अस चरित्र कियो अन्त कराऊ। अब कछु भाखौं अगिल स्वभाऊ॥
विष्णुहिं सैं सतभाव जो देखा। छांडो अंश करौ सृष्टि उरेहा ॥
सतगुण भाव विष्णु कौ जानी। नाभि कमल ब्रह्मा उतपानी ॥
ततक्षण ब्रह्मा गयो अकाशा। विष्णु ध्यान अस वचन प्रकाशा॥
येहो स्वामि निरंजन राया। वसुधा कैसे करौं उपाया ॥
बारी सहित मही जो बोरी। प्रकट करन की युक्ति है थोरी ॥
रजगुन भयो जो ब्रह्मा निवासा। ताकी नाभि से पवन प्रकाशा॥
तीनौं गुन तिय अंड जो भयऊ। दैत्य देह तिन दोनों धरेऊ ॥
उठि ठाढे नहिं पावहिं थाहा। गये जहां तहँ प्रभु अवगाहा ॥

करहिं युद्ध बहु भुजा पसारी । वे दोई बांह विष्णु भुजचारी ॥
बहुतक दिवस युद्ध जो कीन्हा । तिन पुनि ऐसो बोलहि लीन्हा ॥
मांगहु विष्णु देव मोहि सोई । मैं भय छल भाखौं अब सोई ॥
मधु कैटभ तुम दैत्य अपारा । अवश्य होहु तुम वध्य हमारा ॥
होउ वध्य जहँवा जल नाहीं । दोनों गये विष्णु के ठाहीं ॥
यहै चरित्र विधाता कीन्हा । तेजय जल सब सिन्धु महँ दीन्हा ॥
तबहि कियो पुन सप्त पतारा । मीन रूप वसुधा अनुसारा ॥
तेजय बल सब सिंधुमें दएऊ । उनचास कोट मेदनी ठएऊ ॥
साखी-तहां बैठ जो दैवत, जब भयो पृथ्वि प्रचार ॥
तीन देव विन्ती करें, कीजै सृष्टि विचार ॥

चौपाई

प्रथमहिं सतयुग कीन्हौं थाना । कीन्हौं जीव जन्तु उतपाना ॥
सत्यदेह पुनि भयल कुमारी । यह प्रकार रचना अनुसारी ॥
वडवा नाल अग्नि प्रकाशा । सो तीनौं पुर कीन्ह निवासा ॥
कीन्ह्यो ऋषि सब सहस्र अठासी । नौई नाथ सिद्ध चौरासी ॥
कीन्ह्यौ देव प्रथम परगाशा । ये सब कीन्हें अपने आशा ॥
और अनेक राजा सब कीन्हा । यह चरित्र काहू नहिं चीन्हा ॥
यहि कारण मारहिं उपजावहिं । आप स्वारथी जीव हतावहिं ॥

छंद

नहिं बूझ परत अपार महिमा सुरत ऐसी विधि कियो ।
बाज लगावहिं भावहू सब जीव जम के वश रह्यो ॥
तुम बूझि देखो चरित्र वाको जन न कोई बूझई ।
सेवा करत सब स्तुति यम जीव को अटकावई ॥
सोरठा-सुनु धर्मदास सुजान, नाम गहौ चितलाय कै ।
शब्द गहौ परवान, विना नाम नहिं मुक्ति फल ॥

धर्मदास वचन–चौपाई

धर्मदास विन्ती अनुसारी । हे स्वामी तुम्हरी बलिहारी ॥
अब मैं पायो भेद तुम्हारा । मोर मनोरथ करौ प्रतिपारा ॥
पृथ्वी केर चरित्र सुनावहु । जन्म जन्म के भाव बतावहु ॥
जग समीप हरि को विस्तारा । तुम कछु स्वामी अगम विचारा॥
आदि अन्त बूझौ प्रभु राया । अब गुरु कहौ गहौं तुव पाया ॥

साहिब कबीर वचन

सुन धर्मन मैं तोहि बुझाऊँ । हरि चरित्र सब तोहि सुनाऊँ ॥
दैत्य महा बलि भये अपारा । यज्ञ अश्वमेध कीन्ह विस्तारा ॥

बलि चरित्र

बलि भयो दानी महा प्रचंडा । स्वर्ग पताल मही नौ खंडा ॥
जो जांचैं तिहि देय तुरन्ता । जांचय फिर आवै हरषन्ता ॥

छन्द

जाचक भयो जो धनी बहुविधि दीन्ह नहि कोई जग रह्यो ।
पाई मुक्ति वर अवराध्यौ दैत्य ऐसो वृत गह्यो ॥
शुक्र मन्त्री मन्त्र ठान्यो अश्वमेध यज्ञ जो कीजिये ।
मुक्ति बर पावै नहीं तो स्वर्ग बरबस लीजिये ॥

सोरठा–अश्वमेध रचि राज, जान महाफल मुक्ति कर ।
करब स्वर्ग कर राज, इन्द्र करब बस आपने ॥

चौपाई

जानी तीन लोक के भूपा । तब पुनि कीन्हो वामन रूपा ॥
तौन रूप धरि गये पताला । जहँवाँ बलि राची यज्ञ शाला ॥
प्रतिहारै तब बात जनाई । है द्विज ठाढ सुनौ बलिराई ॥
महा पंडित मुख वेद उच्चारा । आज्ञा कहा सो कहौ भुवारा ॥

सुनतहिं बलि अब धरे उपाऊ । अर्घ पावडे कीन्ह बनाऊ ॥
नमस्कार कर पूछी बाता । आज्ञा कहा सुनौ तुम दाता ॥
माँगौं सो मोहि दीजै राऊ । दानी सुन आएऊ तोहि ठाऊ ॥
मोहि देव माँगौं जो स्वामी । महा पंडित तुम अन्तर्यामी ॥

छन्द

परनकुटी छावन चहैं महि देव तुम बलिराई हो ।
पग तीन मांगौं नापतै जामैं होय अटाव हो ॥
सुनि विहँसे बलिराय तबहीं अहो विप्र माँगौ कहा ।
हीरा रत्न मानिक पदार्थ छांड़ महिमें क्या रहा ॥
सोरठा–मांगौ थोरा दान, यही रुचि मोहि सुन नृपति ।
प्रथम वचन परमान, तृष्णा स्वारथ निधि कहौ ॥

चौपाई

शुक्र मंत्रि सुन शीश डुलावा । हे नृप दान मोहि नहिं भावा ॥
राजा सुनत क्रोध तब कीन्हा । बूझि बोल मन्त्री मतिहीना ॥
लीन्हा नृपति हाथ कुशपानी । कीन्ह संकल्प मही दियौ दानी ॥
मानहु विप्र वचन परवाना । लेव तहां जहँवाँ मन माना ॥
तीनौं पुर तीनौं पग कीन्हा । प्रगटे हरि तब सबहिन चीन्हा ॥
देव पूरा नृप आधा पाऊँ । नातर जाय पुण्य परभाऊ ॥
लेव नापि प्रभु पीठ हमारी । तातैं विष्णु वाक्य मैं हारी ॥

छन्द

नाप दीन्ही पीठ अपनी बलि नृपति बड़ राइ हो ।
वाचा व्रत में बांधि राख्यो लक्षमता पैठाय हो ॥
विश्वास दीन्हा मुक्ति कौ भरमाइ राख्यो तेहि हो ।
यही भांति प्रपंच कीन्ह्यो तपी सिद्ध सबहि हो ॥
सोरठा–बूझो सन्त सुजान, हरि दीन्हा जस मुक्ति फल ।
पछतइहो अन्त निदान, एक नाम जाने विना ॥

सनक सनंदन चरित्र

चौपाई

सनक सनंदन चले हरषाई। पुर वैकुंठ सुमेर पर जाई॥
जय रु विजय दोइ रहैं प्रतिहारा। रोकि न तेहि न दीन पैठारा॥
सुनिकै क्रोध ऋषि तब कीन्हा। जय रु विजय कहँ शाप जो दीन्हा॥
हाऊ दैत्य तुम दोनों भाई। जाई रहो मृत्यु मंडल ठाई॥
सुनिकै शाप दोनों गये जहँवा। हरि बैठे लक्ष्मी सँग तहँवा॥
कहि न जाइ तिहि ऋषिकर भाऊ। सुनकर विष्णु कीन्ह पछताऊ॥
थोरी चूक शाप बड़ दीन्हा। नहिं भल कीन्ह अवज्ञा कीन्हा॥
ऋषिन बुलाय कही अस बाता। है परभाव बैर कर घाता॥

साखी–जय रु विजय कहँ शापेऊ, होहू दैत्य प्रभाव।
ताको सुत तुम होहु अब, शाप का बदलौ पाव॥

चौपाई

अब स्वामी तुम वचन प्रमाना। मो कहँ देव भक्ति भगवाना॥
जय अरु विजय काल वश भयऊ। तिन कौ जन्म मनुष्यहि ठएऊ॥
हिरनाकुश वा हिरनाक्ष राऊ। कीन्हा सेवा बहु शम्भू ठाऊ॥
पा वरदान भये बलवन्ता। नहिं कोई देव यक्ष गुणवंता॥
सोई आन पुनि कीन्ह संग्रामा। भाजे देव छांड़ि सब धामा॥

साखी–तब प्रपंच हरि कीन्हा, अस ठाना व्यवहार॥
ताकी नार औधान रहि, भयो पुत्र अवतार॥

चौपाई

हिरनाकुश जब भये हरषंता। चले असुर घर जन्मो पूता॥
सेवकन दीन्हैं रतन पदारथ। शिव सुत दीन्ह जन्म मम स्वारथ॥
बर्ष पांच को भयो जो बारा। गुरु बुलाय पढ़ने बैठारा॥
शिवकी भक्ति तुम याहि पढ़ावहु। माँगहु इच्छा सो फल पावहु॥
लै घर विप्र गये तब बारा। पढ़ौ सु सुत शिव भक्ति विचारा॥
प्रहलाद शिवको भक्ति जो धरहूं। हरषे नृप मम बिथा बिसरहूं॥

साखी–केतौ गुरु प्रबोधै, शिव न पढ़ै प्रहलाद ।
विष्णु विष्णु गुहरावई, सुन गुरु करै विषाद ॥

चौपाई

एक बार नृप सभा मझारी । बैठे सुत कहँ कीन्ह गुहारी ॥
गये प्रतिहार ले आए बारा । गुरु समीप पढ़ने बैठारा ॥
हर्षंत चूम्यो सुत को शीसा । सकल सभा दियो बहुत अशीसा ॥
सुत मोहि कछु पाठ सुनावहु । कहौ वचन मम हृदय जुड़ावहु ॥
तब प्रहलाद पढ़न अनुसारा । धन्य विष्णु जिन काय सम्हारा ॥
पानी तैं जिन पिण्ड बनावा । तिहि प्रभुको कोइ अन्त न पावा ॥
अलख निरंजन देव मुरारी । सुनौ तात मैं तुव बलिहारी ॥
सुनत वचन हिरनाकुश राऊ । क्रोध कीन्ह जस अग्नि स्वभाऊ ॥

साखी–अहो मंद जड़ अकरमी, किमि ठानो मम बार ॥
जाइ पढ़ावहु शंकर, नातर झोंको भार ॥

चौपाई

दिन दशमें पढ़ाइ लै आवहु । शिव कि भक्ति भली भांति सिखावहु ॥
नृप आज्ञा पढ़वे को दीन्हा । तब प्रहलाद पढ़े अस लीन्हा ॥
हरि तज काहि पढ़ौं मैं ताता । चार पदारथ के फलदाता ॥
भक्ति पक्ष सन्तन सुखदाई । जिन प्रभु सकल सृष्टि उपजाई ॥
तब नृप सुन अस वचन उचारा । मारहु सुत यह शत्रु हमारा ॥
हस्ति बुलाए अति बलवन्ता । चलत छांहि भुव देइ पदंता ॥
ता कहँ आज्ञा दीन्ह भुवारा । देव महाबल आंकुश भारा ॥

साखी–हस्ति देख प्रहलाद कह, चलै पराइ पराय ॥
नरसिंह रूप दिखराय हरि, भक्ति करत मन लाय ॥

चौपाई

तब नृप ऐसी युक्ति विचारी । जरत अग्नि देव सुत कहँ डारी ॥
अग्नि जरत तब पवन उड़ानी । प्रहलाद पढ़ैं तब सारंग पानी ॥

तब नृप ऐसी युक्ति अरंभा। बांधो सुत कहँ गाड़ो खंभा ॥
जो कोइ होय तोर रखवारा। ता कहँ सुमिरो सुत हो वारा ॥
नातर छांडु विष्णु कर नाऊँ। अबही घात करों यहि ठाऊँ ॥
तब प्रहलाद सुमिरै भगवाना। कहा तू करब दैत्य बलवाना ॥
अहो धरणिधर अहो मुरारी। यहि औसर प्रभु लागु गुहारी ॥

साखी-खंभा सौं हरि नीकसे, की भयंकर गात ॥
आधा नर आधा सिंह का, कीन्ह दैत्य ही घात ॥

दोऊ बंधु महा बलि मारा। दैत्य मारि महि भार उतारा ॥
फार्यो उदर नखन सौं छीना। सुर औ नरन हरष बहु कीना ॥
मांग प्रहलाद इच्छा फल आजू। तोहि भक्त लग हनौ दैत्यहि राजू ॥
कर जोरे प्रहलाद अस भाखा। हे स्वामी भक्तन प्रण राखा ॥
मोक्ष पिता कहँ दीजै स्वामी। मोहि भक्ति सुन अन्तर्यामी ॥
साधु साधु विष्णु अस भाखा। पुत्र पिता प्रण भल तुम राखा ॥
दोई जन्म आगे औतारब। तब तोर पिता देख मैं तारब ॥
तैं मम भक्ति कीन्ह बडि सेवा। ताकर फल भाषौ कछु भेवा ॥
दैत्य हते जब बाल कन्हाई। आवे देव सबै तेहि ठाईं ॥
करहिं सुयस हरि सबहि बखाना। प्रहलादहि देव स्वर्ग अस्थाना ॥

साखी-कीन्ह इन्द्र प्रहलाद कहँ, सब मिलि कीन्ह विचार ॥
नरसिंहरूप नर कीन्हा, ताको यह व्यवहार ॥

नारद चरित्र

चौपाई

एक समय इन्द्र यज्ञ ठानी। निवते सिद्धि ऋषि औ ज्ञानी ॥
पहुँचे गन गंध्रब सब झारी। सब मिलि कीन्ह स्नान सुधारी ॥
जो कोई गया इंद्र अस्थाना। इच्छा भोजन सब कहँ ठाना ॥

बहु विधि इंद्र करे सतकर्मा । पुरै न घंट जानसको मरमा ॥
तब नारद अस कीन्ह विचारा । धरौ धीर कहौ वचन उचारा ॥
ऋषि जमदग्नि इच्छा खावा । तिहिं प्रभाव अनंग जनावा ॥
ऋषि रत करैं कै छांड़ैं ठावा । बजै घंट अस मता सुनावा ॥
सुनतहि ऋषि तब कीन्ह पयाना । बज्यो घंट पूरण यज्ञ जाना ॥

साखी–ऋषि मन में तब बूझ्यो, जान करौ अब व्याहु ॥
ऋतमान जब आये, राजा कश्यप ठांहु ॥

चौपाई

देव नृपति कन्या इक मोही । मांगौ आजु जाव नृप तोही ॥
तब कन्या नृप दीन्ह बुलाई । कीन्हो व्याह ऋषी तेहि ठाई ॥
लै कन्या ऋषि घरहि सिधाये । भृगु कुल हरि औधानहि आये ॥
जो धर्मदास संशय कछु तोही । कहौ बुझाय चरित्र अब वोही ॥
भय क्षत्री महि व्याकुल भयऊ । मारन तासु जन्म हरि लयऊ ॥
निछत्र कीन्ह बहु जीव संहारा । बैर हेतु भृगुकुल औतारा ॥
सहसबाहु ऋषिगन जो मारी । पिता बैर सो प्रथम सम्हारी ॥
क्षत्री मारि निक्षत्री कीन्हा । भृगु रूप विष्णु को चीन्हा ॥

साखी–यहि विधि क्षत्री निकंदऊ, परसराम बली वीर ॥
आगे भाव बतावऊँ, सुनौ संत मत धीर ॥

श्रवण चरित्र

चौपाई

अवध नगर दशरथ बड राऊ । पुरुषारथ जिन कहौ प्रभाऊ ॥
तिनहि नारि बहु सबहि पियारी । रात दिवस जौ कर हित भारी ॥
एक समय आखेटहिं गये राऊ । पशु भोरे कियौ ऋषि कहँ घाऊ ॥
पानी तट ऋषि हरि हरि कीन्हा । नृप पछितानो जब मुनि चीन्हा ॥
ताके पितहि श्रवणकी बाता । तुव सुत दशरथ कीन्हौ घाता ॥

साखी-अहो ऋषि तुव सुत कहँ, दशरथ मार्‍यो बाण ॥
यह चरित्र सुन मुनिवर, तत्क्षण छांड्यो प्राण ॥

दोनों ऋषी काल बस भयऊ । नृप अन्याय बैर हरि ठयऊ ॥
सुत बिहून जस ऋषि तन त्यागा । तैसे काल नृप तोर अभागा ॥
पुत्रके शोक काल होय तोरा । देहू वैर कहा सुन मोरा ॥
नारद ऋषि तब कीन्ह तिवाना । राजा दक्ष यज्ञ जो ठाना ॥
देव ऋषी आये तिहिं ठाईं । सब नृप बहुतै सेवा लाईं ॥
ऋषि तब कहै सुनो दक्ष राऊ । शिवको जियत निवत बुलवाऊ ॥
इन्द्र यज्ञ जब निवत जु आये । गण गन्धर्व सब देव रहाये ॥
तहँ शिव कीन्ह तोर अपमाना । आई कहौ सुन नृपति सुजाना ॥
सुनतहि क्रोध नृप पर जरेऊ । जरत हुताश मनहु घृत परेऊ ॥

साखी-शिव विहाय सब निवते, चलै सबै तिहि पास ॥
देख गगना मुनि वरन को, सती वचन परकास ॥

चौपाई

हे प्रभु कहां जायँ मुनि राईं । सो प्रभाव प्रभु मोहि बताईं ॥
राजा दक्ष यज्ञ जो ठाना । तहां जायँ ऋषि चढे विमाना ॥
हे प्रभु मो कहँ आयसु होईं । यज्ञ तात कर देखों सोईं ॥
निवते बिन न बूझियत नारी । ऐसी इच्छा आहि तुम्हारी ॥
चली सती तब लागि न बारा । पिता भवन तहँवा पगु धारा ॥
देखत नृपति महा उर जरेऊ । काहू समाधान नहिं करेऊ ॥
व्याकुल भई दिगम्बर नारी । यही ब्याह मम कुल भई गारी ॥
सुनत विषाद सती मन जागा । परी अनल तब देही त्यागा ॥
हाहाकार भयो सभा मझारी । यज्ञ विध्वंस भयो सुन चारी ॥
हिमाचल गृह सती अवतरिया । गण दीन्ह नाम पारवती धरिया ॥
यहै चरित्र विष्णु जब देखा । शिव विवाह गुण मनमें पेखा ॥

साखी–शिव समाधि छूटै नहीं, कीन्हौं विष्णु उपाय ॥
काम भाग परपंच कर, संगहि दीन्ह छिपाय ॥

चौपाई

सर समीर लागौ जब अंगा । बाल वृद्ध व्यापौ सब संगा ॥
बार बार सब जग बस भयऊ । ऋषि मुनि व्याप्ति काम जो ठयऊ ॥
नारद ऋषि पारासर दोऊ । भये काम बस मुनिवर सोऊ ॥
तिन कुल व्यासदेव उतपानी । इनहू रति जो बरबस ठानी ॥
पारासर गए सागर तीरा । देख नारि मन धरहि न धीरा ॥
मछोदरी जा कहँ जग कहई । व्यास देवकी जननी अहई ॥
नारद ऋषि किय तहां तिमाना । राजा एक स्वयम्बर ठाना ॥
ता कुल कन्या है कुलवंती । निश्चय व्याह करो जिहि संती ॥
चल ऋषि हरिसों बिन्ती कीन्हा । ब्रह्मा पुत्र कहिं वचन अधीना ॥
हे स्वामी मोहि दीजे रूपा । करिहौं व्याह मोहि रुचि भूपा ॥
विष्णु अपन मन कीन्ह विचारा । कर परपंच ऋषि सब झारा ॥

साखी–शिव की नारि बनाऊं, सोई करब उपाय ॥
भयो काम बस नारद, बैर देव मम भाय ॥

चौपाई

नहिं जाने नारद मतिहीना । वानर कर मुख ऋषिकर दीन्हा ॥
चलो ऋषी मन भयो अनंदा । कृपा कीन्ह मोहि बालगुविन्दा ॥
अवशि जाय हम व्याहैं नारी । जहँ पुनि पहुँचे तहां कुँवारी ॥
दर्पन दीन्हों सभा मँझारी । ऋषि अपनो प्रतिबिंब निहारी ॥
देखत ऋषि क्रोध तब कीन्हा । विष्णु भाव कबहूं नहिं चीन्हा ॥
जब हरि बिहँसे नारद पाहीं । सती यज्ञ तुम बूझव नाहीं ॥
परबस देखत मैं तन जारा । अब मैं कीन्हा भाव तुम्हारा ॥

साखी–बूझ पर्‌यो नारद जबै, गहे विष्णु के पांय ॥
क्षमा करो अपराध प्रभु, नर कौ रूप बनाय ॥

चौपाई

कन्या हाथ लीन जयमाला । नावहु गले गहि चरण गुपाला ॥
शिव विवाह पार्वती सों कीन्हा । सती हेत तिन भलकै चीन्हा ॥
तबही रूप प्रथम कर दीन्हा । दीन्ह शाप विष्णु सुन लीन्हा ॥
अहो विष्णु तुम वैर विचारा । तुमहू वैर देव व्यवहारा ॥
वसुधा भारहि व्याकुल आही । सुत पुलस्त महा बल ताही ॥
ले अवतार मारहुगे सोई । सो पुन हर तुम्हारा जोई ॥
नारदका जस कीन्हौं अंगा । तईसन जाय करो परसंगा ॥
बरबस वैर लेव सब पाहीं । विधिना रूप बनावै ताहीं ॥
विष्णु अपन मन कीन्ह तिवाना । काके गिरह लेहुँ अवधाना ॥
पूर्व जन्म जो दशरथ राऊ । सेवा कीन्ह यहा परभाऊ ॥
माँगिन तिन फल अंतक बारा । पुत्र होहु गोपाल हमारा ॥
आये नृपति संग त्रैनारी । सेवा कीन्ही यही प्रकारी ॥

साखी–लेव अवतार अयोध्या, दैत्य बधन जो होय ॥
आज्ञा भयी आकाश तैं, करु उपाय अब सोय ॥

चौपाई

हिरनाकुश हिरण्याक्षहि मारा । ताकौ दियो मुनि गृह अवतारा ॥
मुनि पुलस्त गृह जन्मौ बारा । रावन कुंभकर्ण बरियारा ॥
जा कहँ विष्णु स्वर्ग कर राऊ । भक्ति हेतु ता कहँ जन्माऊ ॥
नाम विभीषण भक्त हरि केरा । जपै विष्णु नहि लावै बेरा ॥
नृप कश्यप दुतिया अवतारा । सो तो भयऊ अवध भुवारा ॥
तिनके गृह अवतारहि लीन्हा । अपने अंश चार तिन कीन्हा ॥
राजा के गृह जन्मौ वारा । ज्योतिष राम वर्ग उच्चारा ॥
जेष्ठ पुत्र कौशल्या सुतही । राम नाम थापो पुन तबही ॥
सुमित्रा के दोई बालक आंही । लषन शत्रुहन भाषौ ताँही ॥

दोई जन्म सुमित्रा किये सेवा । तातें हरि प्रगटे दोई भेवा ॥
कैकई सुतहि भरत जो भाखा । विप्रन दीन्ह पदारथ थाका ॥
कौशिक ऋषि आये तेहि ठाईं । नृप दशरथ तब हित बहु पाईं ॥
बार अनेक दण्डवत कीन्हा । नृप कहँ आशिर्वाद जो दीन्हा ॥
है प्रभु कह आयसु जो होई । कृपा करो जिन राखौ गोई ॥
जेष्ठ पुत्र जो राम सुजाना । ताहि देव नृप हो मम माना ॥

साखी—नृप बूझौ मन आपने, दिये बनै परकाज ॥
थाती सौंपौ पुनि तुमहि, आन देखु मुनिराज ॥

चौपाई

राम लषण चले मुनिके साथा । ताडुका बांधि ब्याहब रघुनाथा ॥
चले राम लछमन मुनि संगा । देख रूप जैसे कोटि अनंगा ॥
दिक्षा मंत्र दियो ऋषि जानी । दीन्ह जाप कहि अमृत वाणी ॥
ऋषि आश्रम आये रघुराया । यज्ञ शाला मुनिवर बैठाया ॥
दीन्ह तुरंत तब निर्भय भारा । मुनिके दैत्य जो करे संबारा ॥
आये बीर महाबल भारी । लागी होन परस्पर मारी ॥
मुनिवर आज्ञा दीन्ही जबही । ताडुका दैत्य मार हरि तबही ॥
ताडुका दैत्य राम जब मारा । ऋषि मुनिवर तब कियो यज्ञ शाला

साखी—मिथिला नगरी रहत हैं, रच्यो स्वयंवर राय ॥
चलो राम सो देखिये, मुनिवर संग सहाय ॥

चौपाई

चले राम लक्ष्मण औ राऊ । मिथिला नगर अब धरिये पाऊ ॥
पाहन शिला जबै पग लागा । प्रभु प्रगटे जो खटका भागा ॥
गौतम नारि अहिल्या नाऊँ । ताको हरि पठई निज ठाऊँ ॥
समाचार मिथिलापति पाये । आदर के मुनिवर लै आये ॥
समाधान नृपति बड़ कीन्हा । उत्तम मंदिर बैठक दीन्हा ॥

जो कोइ आय जान यज्ञ शाला । सब कहँ पोषण कीन्ह भुवाला ॥
पहुँचे अवधि सुदिन आये । राजा नगर महँ ढोल बजाये ॥

साखी-जाके बल बहु होवै, धनुष उठावै सोय ॥
सीता ब्याहों ताहिको, मिथ्या वचन न होय ॥

चौपाई

चल भइ सीता जहँ फुलवाई । देवी पूजन मातु पठाई ॥
आवत राम मार्ग जब देखा । सुफल जन्म आपुन तब लेखा ॥
अहो अंबिका आदि भवानी । सुनिये मातु तुम अन्तर्जामी ॥
मोर मनोरथ पुरबो माता । सो बर देव जो मनमें राता ॥
बिधि बिन्ती सीताकी जानी । ततक्षण भई अकाश तें वाणी ॥
अहो सीता लक्ष्मी अवतारा । निश्चय तोर राम भरतारा ॥
सुनत संदेशा भयो अनन्दा । जिमि चकोर पाये निशि चंदा ॥
देवी पूजि गई निज सीता । मनमें हर्ष बहुत पुनि कीता ॥
आई सिय जहँ सृष्टि भुवारा । उठै न धनुष सबै बल हारा ॥
रावन बालि महा बलधारी । उठै न धनुष सबै बल हारी ॥
जब नृप जनक भयौ बिसमादा । उठै न धनुष जन्म मम बादा ॥
तब रघुवर मुनिको शिर नावा । सभा मांझ तब धनुष उठावा ॥
खैंचो राम धनुष चढ़ो जबही । महा अघोर शब्द भयो तबही ॥

साखी-मुनि गण त्याग्यो ध्यान तब, महि मंडल भुइं चाल ॥
हरष्यो राजा जनक तब, सिया दीन्ह जयमाल ॥

चौपाई

टूट्यो धनुष धूम भइ भारी । परसराम तब लाग गुहारी ॥
आवत तासु जो नृपति सकाने । बहुत नाम जो सुनत प्रमाने ॥
सभा मांझ आये परसरामा । सब मिल दंडवत कीन्ह प्रणामा॥
भृगुकुल कह सुन मिथिला राऊ । तोर्‌यौ धनु किन मोहि बताऊ ॥

रघुपति कहैं धनुष मैं मापा । तुम किहि काज करत है दापा ॥
देखि राम भृगुकुल किय रोषा । मारौं शीस जो करौ सरोषा ॥
बिहँसे राम लखन दोइ भाई । हे द्विज यान करौ सुरमाई ॥
जान बूझि जिन होहु अयाना । मिटै तिमिर ऊगै जब भाना ॥
द्विज कुल देखि किया परमाना । तातें तुमको भयो अभिमाना ॥

साखी-द्विज कुल धनुष जो आपनो, दीन्ह रामके हाथ ॥
मैं क्षत्री बल भञ्जन, खैंचो हो रघुनाथ ॥

चौपाई

खैंच्यो राम तासु धनु कैसा । तृणहि उठाय लेत हैं जैसा ॥
परशराम गहि ताके पाऊ । क्षमा करो कौशिल्या राऊ ॥
कर प्रणाम भृगु वनहिं सिधारे । रामचन्द्र रहै सभा मझारे ॥
ये जो आहि सो त्रिभुवन राऊ । तिन महि मंडल तेज प्रभाऊ ॥
कहैं सबै हरि को अवतारा । परशुराम औ राम भुवारा ॥
जो निज इच्छा आवत जाई । तौन गर्भ काहे दुख पाई ॥
ऐसा निरंकार परकाशा । सब तें न्यारा सब में बासा ॥
इच्छा कर जस त्रिभुवन राऊ । इच्छा आस करैं निर्माऊ ॥
बाजा लगा जीव जो राखा । ताकी भक्ति सबै मिल भाखा ॥

साखी-कोइ इक ज्ञानी पारखी, परखे खरा औ खोट ।
कहे कबीर तब बांचि हैं, रही नाम की ओट ॥

चौपाई

राम लखन के सुनो प्रभावा । मिथिलापति एक दूत पठावा ॥
नृप दशरथ बेगहि चलि आहू । राम लखन कर सुनो विवाहू ॥
नृप दशरथ बेगिही चलि आएहू । ऋषिन करायवो तहां विवाहू ॥
चारौं भाइ ब्याह तिहिं पाहीं । बहुत अनँद कीन्ह मन माहीं ॥
चारौं भाई और भुवारा । लै चलि आये अवध मझारा ॥
तहां आइ विप्रन दिय दाना । कछु दिन कियौ सुखराम सुजाना ॥

भरत गये जहँ जननी ताता । विद्या पढैं बहुत हरषाता ॥
अवध नरेश मता अस ठाना । रामहिं राज देहु मन माना ॥
सब मिलि ऐसा मत उपराजा । करब बिहान राम कहँ राजा ॥
यह चरित्र जब देख भवानी । समझी निराकार की बानी ॥

साखी—मूढ मनुष्य न बूझै, राम लीन्ह अवतार ॥
मारे दैत्य संघारे, लंका के सरदार ॥

चौपाई

सवा लक्ष जीव प्रतिदिन खाई । कौतुक राज बनावत राई ॥
अंबिका गई कैकेई पासा । हे रानी तुव पति मति नाशा ॥
रामहि काल देत हैं राजू । निश्चय है हैं तोर अकाजू ॥
जो वर दियो नृपति तोहि काहीं । सो तुम मांगो आजुहि माहीं ॥
भरतहि राज राम बनो बासा । माँगहु आज जो होइ हुलासा ॥
गयी कैकेई मांगा बर सोई । राम बिछोह प्राण नृप खोई ॥
त्यागो प्राण अवध नृप जबहीं । सरवन बैर जन्म लियो तबहीं ॥
चले राम लक्ष्मण सिय साथा । करहिं शोक धुनहीं बहु माथा ॥
रामहिं संग दूर लग जाई । फिरहु राम तुम तात दुहाई ॥
सुमंत मंत्री अस वचन सुनाये । पठये दूत तब भरत बुलाये ॥
जाइ बुलावहु भरतहि आजू । उन कहँ देहु अवध कर राजू ॥
आज्ञा भयी फिरचो सब लोगा । सब कहँ भयो राम कर शोगा ॥

साखी-भरतहि पठै संदेश पुनि, तबहि भयो रवि सांझ ॥
गये जहां तहां रघुपति, बैठ गये वनमांझ ॥

चौपाई

राम लखन बैठे सिया लाई । फिरहु भरत तुम तात दुहाई ॥
फिरहु भरत प्रभु आयसु होई । प्रजा लोक संग सब कोई ॥

राम लक्ष्मण औ सिय साथा । वन मारग लीन्है धनु हाथा ॥
बहु दिन रहै ऋषिनके ठाईं । समाचार लंकापति पाई ॥
लीन संग मारीच बलवंता । हरै सिया मन हो हर्षंता ॥
मारीच ही कीन्ह मृग वेषा । नहिं छल बूझे राम नरेशा ॥
मृग को देख नृपत तब भूला । लोभ मोह को वन जो फूला ॥
प्रगट्यो सांझ अन्ध भो भाना । बिगर्‍यो मोह जो ज्ञान छिपाना॥
राम लखन गए मृगहि शिकारा । सीतहि रावन रथ बैठारा ॥
आगे मारग रोक जटाऊ । मार गयो तिहि रावण राऊ ॥
मारीचहि राम कीन्ह जब घाता । बूझ परी नारदकी बाता ॥
सिय हर रावन मार लुटेवा । जाकी जगत करत है सेवा ॥
ढूँढहु लक्ष्मण वन गुहराई । मोह भयो जब सिया न पाई ॥
मारीचहि मार राम पछिताना । जबहि जटाउ कही सहिदाना ॥
हनूमान मिल पंथ मँझारा । रावन मार्‍यो राम भुवारा ॥
सुन स्वामी तू त्रिभुवन नाथा । कृपा करो तुम मोरे साथा ॥
हनूमान जब कीश अनुसारा । कुशल प्रभाव पूँछ तिहि बारा ॥
बालि सुग्रीव दोइ जन भाई । बालि लीन्ह वध बंधु छुडाई ॥
जो प्रभु कीजे कपि पर दाया । मारो बालि सुनो रघुराया ॥

साखी—रामचन्द्र अस बोले, कीने बालि कुकर्म ॥
मारौं ताहि पल भीतरै, जान कहौं अस मर्म ॥

चौपाई

आए रघुपति जहँ गए राजा । बालि मार सुग्रीव निवाजा ॥
मार बालि कहँ एकहि तीरा । बूझो सन्त गही नहिं पीरा ॥
यह तो भेद जानि है सोई । सतगुरु दया जाहि पर होई ॥
तब हनुमान लंक कियो गवना । पहुँचे जाय जहाँ रह रवना ॥
पहुँचे जाय भेट भइ सीया । दैत्य देख वह कौतुक कीया ॥

मारहिं कपि कहँ कौतुक जानी । तब हनुमान आप बल ठानी ॥
जारि नगर तब कीन्हों छारा । नगर लोग सब कहैं बिकारा ॥
साखी–आय कहौ रघुपति सौं, समाचार हनु वीर ॥
सिंधु बांधि हरि ऊतरे, दैत्य वधन रनधीर ॥

चौपाई

आए कीन्ह दैत्य संग्रामा । मारे दैत्य बहुत तब रामा ॥
कुंभकरण निद्रा सौं जागा । रघुवर सौं युद्ध करै अनुरागा ॥
कहै विभीषण सुन नृप रावन । आए राम जो असुर सतावन ॥
सिया संग लै जाहु तुरंता । क्षमा अपराध गहु पग हर्षता ॥
मारी लात बिभीषण भाई । क्रोधित मिलो राम कहँ आई॥
समाधान नृपति बड कीन्हौं । लंका बकसि ताहि कौ दीन्हौं ॥
कुंभकरण गहि समर अपारा । ताको हरि बहु बल सौं मारा ॥
इंद्र जीत तब लाग गुहारी । कर अश्वमेध तपस्या भारी ॥
तिन कपि रोके कपिदल जुथ्था । विभीषण भेद कहो अज गुथ्था ॥
जौलौं पूर्ण जज्ञ ना होई । मारहु राम वध करै सोई ॥
भयो प्रभात राम जब देखा । लक्ष्मण लाग्यो बान विशेखा ॥
साखी–मार सो महाबली, मेघनाद जिहि नाम ॥
सुनत क्रोध रावन कियो, कठिन कीन्ह संग्राम ॥

चौपाई

दैत्य महाबल शक्ति संधाना । जूझे लक्ष्मण भया निदाना ॥
तुम हनुमान लै आवहु मूरी । उत्तर दिशा देश बड़ दूरी ॥
दौनागिर पर्वत कर नाऊ । संजीवन सहित ताहि लै आऊ ॥
संजीवन बास तें लक्ष्मण जागा । हर्ष भये तब कपिकर भागा ॥
तब रघुवीर घेर गढ लंका । दैत्यनके जी उपजी शंका ॥
तब रावण गहि समर अपारी । बंधुहि व्याकुल हे सब झारी ॥

रामचन्द्र रावन कहँ मारा । वार अनेक सीस भुइ पारा ॥
मारयो हृदय ताक कै जबही । रावन काल वश्य भयो तबही ॥
सीता समाधान हरि कीन्हा । ताको रूप न काहू चीन्हा ॥
सिया लीन्ह रघुवीर बुलाई । राज विभीषण दीन्ह सुहाई ॥
लै सीतहि अवधपुर आना । भरतहि कीन्ह बहुत सनमाना ॥
सीता सती रही अवधाना । गर्भ वास लौकुश उतपाना ॥

साखी—राज करै रघुवंश मणि, तब अस कीन्ह प्रमान ॥
थाप्यो कोट अयोध्यहि, सुनौ मंत्र हनुमान ॥

चौपाई

जबहि राम लंका से आये । अयोध्या कोट उठावन लाये ॥
लक्ष्मण भाइ संग तब लीन्हा । सुदिन जानकै तब निव दीन्हा ॥
उठत कोट सो भय अस शोरा । है कछु द्रव्य नीच अस बोला ॥
सुन अस वचन राम रघुराई । खनहु खनहु अस आज्ञा पाई ॥
चहुँ दिश खनै जो बाजु कुदारा । तपसी एक देख तहँवारा ॥
लुहिडा माथे दै तप करई । जोग अरंभ सदा चित धरई ॥
भौंह बार मुख रहे छिपाने । बैठे महि के तले सयाने ॥
देखा ऋषिहि बहुत भय माना । शाप न देई बहुत सकाना ॥
छांड़ि समाधि निरखि जब हेरा । राम दंडवत किये चहुँ फेरा ॥

साखी—बोले वचन ऋषी तब, कोहो सो कहु मोहि ॥
रूप भाव बहु आगर, देखों नृप सम तोहि ॥

रामचंद्र वचन—चौपाई

दशरथ तनय राम मोहि नाऊ । रहौं समीप अवधपुर गाऊ ॥
ऋषि कहो भयो राम अवतारा । पूँछौं यह कह करब भुवारा ॥
हे ऋषि राज मैं कीर्ति बनाऊँ । जातैं रहे यहि जग में नाऊँ ॥
कह ऋषिराज जीवन है थोरा । छांडो कोट कहा सुन मोरा ॥

राम कह्यो ऋषि सो निज मर्मा। केते दिवस किया तपधर्मा ॥
लोमश ऋषि मोर है नाऊ। अपने जन्म को कह्यो प्रभाऊ॥
आठ पहर रात दिन होई। अहो रात कहैं सब कोई ॥
दोई पाख कर प्रहर प्रमाना। सो एक दिवस पित्रन को जाना॥
वर्ष दिवस जब उनको होई। एक दिवस देवन को सोई ॥
बारह वर्ष दिवस जब जाना। चौदह सहस्त्र इक मनु जो बखाना॥
सप्त मनु जबही जाइ बिगोई। तब इक इन्द्र काल सब होई ॥
सप्त इन्द्र जब होवै नाशा। इक ब्रह्मा को होई बिनाशा ॥
साखी-सप्त ब्रह्मा जब विनशहीं, तब एक विष्णु को नाश॥
सप्त विष्णु जब बीतहीं, तब इक रूद्र बिनाश ॥
सोरा रुद्र गति जब हो जाई। तब इक रोम मम परे खसाई ॥
तातैं लोमस नाम है मोरा। करा समाध जीतबै है थोरा ॥
सुन रघुवीर अचंभित भयऊ। ऋषिको वचन प्रतीत न लयऊ॥
राम चरित्र ऋषी तब जाना। कथा सोंचौ रघुवीर सुजाना ॥
देव अंगुष्ठ भैंटहु जो मोही। तैसे अंगुष्ठ देऊँ मैं तोही ॥
यहै कमंडल मोरे साथा। काढ़ौ गिन जो आवहि हाथा ॥
क्रोधित हाथ डार भगवाना। गिनि उनचास कोट परवाना ॥
परचो पाय रघुवीर न जाना। लोमश वचन सत्त कर माना ॥
एतिक मुदरी गिर्नी बिशेषा। कमंडलको कहँ कहिये लेखा ॥
इतने राम रावन होय गएऊ। सुनि रघुवीर अचंभौ भएऊ ॥
साखी-जान्यो जन्महि अल्प जब, चले स्वर्ग अस्थान ॥
निराकार निरञ्जन, तासु मर्म नहिं जान ॥

चौपाई

त्याग्यो राजपाट बन्धु चारी। गये स्वर्ग नृप सैन सिधारी ॥
आप इच्छा जन्म पुन लीन्हा। कृष्ण चरित्र आगे पुन कीन्हा॥

जाहि राम को जपत संसारा । ताको तो ऐसो व्यवहारा ॥
बाजी दिखाय जीव सब राखा । मारे अन्त करै अस लाखा ॥
काह करै जिव बस परेऊ । तातैं सत्त शब्द चित धरेऊ ॥
जमराजा है अति बरबंडा । मारै ब्रह्मा विष्णु नौ खंडा ॥
काल फांस कैसे मुक्तावै । जब लग सत्तनाम नहिं पावै ॥

साखी—नाम अदल जो पावै, कहै कबीर विचार ॥
होय अटल जो निश्चय, जमराजा रहै हार बार॥

चौपाई

सुन धर्म मैं तोहि सुनाऊं । कृष्ण चरित्र को भाव बताऊं ॥

कृष्णचरित्र

राम रूप त्रेता अवतारा । गयो बियोग सकल संसारा ॥
करै भेख बहुत विधि कैसा । लेखा मूल ब्याज है जैसा ॥
एक नार रघुपति दुख पाया । सोरा सहस्र गोपि निरमाया ॥
प्रथमहि गोपिन को निरमाया । पीछे कृष्ण देव है आया ॥
देवकी कहँ जन्म लियौ जाई । दीन्ह सबै गोकुल पहुँचाई ॥
नंद के गेह आन तिन राखा । है मम पुत्र जसोधा भाखा ॥
करें नंद जसोधा महरी । पल भर कृष्ण राख न बहरी ॥
गोपी सबै विलास बनावैं । रात दिवस हरिके गुण गावैं ॥
नृप दशरथ वसुदेव अवतारा । कौशिल्या सुमित्रा देवकी वारा॥
नारद ऋषि कंसहि कह भेऊ । यह निज जन्म न जानै केऊ ॥
उपजो तुव वैरी भगवाना । नंद गेह गोकुल अस्थाना ॥
सुन नृप कीन्ह जो बहुत उपाई । मारहु ताहि कहै अस राई ॥
कागासुर इक दैत्य अपारा । बलपौरुष जिहिंकै अधिकारा ॥
ताको कंस वचन अस भाखी । राम कृष्ण कर फोरहु आंखी॥
चल्यो दैत्य आयो हरि पाहीं । सखा संग जहँ बाल कन्हाहीं ॥
जान्यो कृष्ण दुष्ट यह आही । चपट कै मारचो है हरि ताही॥

साखी-मारौ दैत्य महा बली, दैत्य राज भयमान ॥
भगनी तासु जो पूतना, ता कहँ दीन्हों पान ॥

चौपाई

चली पूतना कर छल भेषा । गरल लगाइ पयोधर रेखा ॥
लेकै पयोधर कृष्ण लगाई । तारी तबै सबै विष खाई ॥
एक बार ग्वालन संग गएऊ । जान बकासुर छैंकै लएऊ ॥
मारचो कृष्ण ताहि पल माहीं । नहीं दैत्य जीते कोइ जाहीं ॥
इन्द्र पूजा नहिं दीन्ह गुवारा । वर्षै इंद्र अखंडित धारा ॥
डारचो इंद्र वर्षा दिन साता । हरि गिर लीन्ह्यो ऊपर हाथा ॥
साखी-सात दिवस जब वर्षेऊ, जान्यो इंद्र भुवार ॥
क्षमा अपराध अब कीजिये, देव विनय अनुसार ॥

चौपाई

एक बार कालिन्दी तीरा । बछड़े लै गए जादो बीरा ॥
लागी प्यास पियावहिं पानी । पीवत ही भइ सब की हानी ॥
देखत कृष्ण अचंभौ भयऊ । उरग गरल सांवल तन भयऊ ॥
पुन धँस गये तहं यदुराई । नाथ्यो नाग वारि महँ जाई ॥
साखी-यह चरित्र माधव कियो, जानत नाहिन कोय ॥
बूझेंगे कोइ बिरले, सतगुरु मिलिया सोय ॥

चौपाई

केसी नाम बंधु बड़ बीरा । तिन पुनकीन्हा असुर शरीरा ॥
तब निकंद कीन्हे जो ठाना । छलके मारचो तेहि भगवाना ॥
सुकल केश कहँ बेग पठावहु । राम कृष्ण कौं बेग लै आवहु ॥
चल अक्रूर आये हरि पाहीं । कृष्ण चरित्र बूझे पल माहीं ॥
सोरा सहस्र अबला सों नेहा । बूझ न परै जीव दोइ देहा ॥
साखी-बहु क्रीडा हरि कीन्हीं, जानत नाहिं न कोय ॥
अजिया पुत्रहि पालिये, आप स्वारथी होय ॥

चौपाई

मारत तासु बार नहिं लावा । ऐसा देखो हरी स्वभावा ॥
रावन कुंभकरन जा मारा ।ताकोजन्म शिशुपाल अवतारा॥
चलत कृष्ण गोपिन किए शोगा। संग भले तब जादों लोगा ॥
मारन कौं हरि मता जो ठाना । मथुरासे हरि कीन्ह पयाना ॥
मुष्ट चार और दोइ खँडावा । सब असुरनहिं कंस गुहरावा ॥
रंग भूमि नृप कंस बनावा । काल रंग भूमी ही आवा ॥
चल भए कृष्ण जहां कहँ तबही। कुबरीको सन्मान कियो जबही॥
पूर्व जन्म तिन सेवा कीन्हा । भक्ति हेतु ताको रति दीन्हा ॥

साखी-कुबरीको सन्मान कर, चल भयो राज द्वार ॥
हस्ती कौं बल महाबल, तिनको पहिले मार ॥

चौपाई

मारत तासु वीर जो धाये । मुष्ट चार अरु दोइ खंडाये ॥
मुये नृप पुन तब खस परेऊ । कालिन्दी तट आन जराएऊ॥
उग्रसेन कीन्हों सन्माना । गये हरि मात पिता अस्थाना ॥
पूर्व जन्म सेवा तिन कीन्हा । भक्ति हेतु मैं दर्शन दीन्हा ॥
जरासन्ध नृप लाग गुहारी । सत्रह बार तिन कीन्हीं मारी ॥
तैंतिस क्षोहणि दल तिन जीता । जमन केर सम्हर पर बीता ॥
नृप मुचकुंदहि तब पुनि मारा । ताकौ हरि पुनि बैर विचारा ॥

साखी-यह चरित्र कहु कैसौ, जमन को आनि मराव ॥
जीव कौ बदला जीव है, अदल अंश कर न्याव॥

चौपाई

कंस मार हरि गोकुल गएऊ । गोपिन समाधान हरि किएऊ॥
सब मिलि कीन्हों मंगलचारा । तब हरि ऐसौ वचन उचारा ॥
दुरबासा ऋषि तप बड़ कीन्हा । इच्छा भोजन माँगहि लीन्हा ॥

जाय सबै ले जमुनहि पारा । लै चलि भोजन भर भर थारा॥
जमुना बहु विधि आप गुसाईं । तब हरि ऐसा वचन सुनाईं ॥
कहो जाइ कालिन्दी तीरा । कृष्ण छुवा नहिं मोर शरीरा ॥
होई है थाह जाइ हो पारा । चल भो गोपी लाग न बारा ॥

साखी-कृष्ण सन्देशा कहिके, सबै भईं तब पार ॥
जाइ कराइन भोजन, तब विन्ती अनुसार ॥

चौपाई

तब गोपिन अस बचन सुनावा । हे प्रभु पार जाहिं किहिं भावा॥
कालिन्दी से कहि सब मादा । ऋषि नहिं खाइब मोर प्रसादा॥
कहत सन्देशा सब भईं पारा ।अचरज भयो मन माहिं बिचारा॥
ठगई लगा तीनों पुर माहीं । कृष्ण कहाये अचरज नाहीं ॥
चौथे लोक बसै परधाना । ताहि खबर कहु विरलन जाना॥
तपके तेज कहा बड़ भएऊ । तीन लोक जो अचरज ठएऊ ॥
एकबार शिशुपाल भुवारा । कृष्ण से कीन्ह जो समर अपारा॥
मारयो तबै दैत्य बल बीरा । निकसे प्राण जो छांड़ शरीरा॥
सब के देखत कृष्ण जो खावा । तेहु न बूझे काल स्वभावा ॥
सब के देखत ग्रास जो कीन्हा । तासों कहे मुक्ति हरि दीन्हा ॥

साखी-काल सबन को ग्रास्यो, वचन कह्यो समुझाय ॥
कहैं कबीर मैं का करो, देख नहीं पतिआय ॥

चौपाई

बूझो संतो काल की हानी । हरि को भाव भले मैं जानी ॥
कृष्ण के भयो जो प्रदुमन बारा ।ताकुल अनिरुध लीन्ह अवतारा॥
सुन प्रवीन बानासुर राऊ । शिव सेवही महाबल पाऊ ॥
ता नृप के दुहिता एक भयऊ । ऊखा नाम तासु सो ठयऊ ॥
रूप आगर किमि करों बखाना। ताहि देख कर काम लजाना ॥
उन्मद यौवन भयो पुन जबही । काम बान सर लागेउ तबही ॥

साखी-तासु दूत गए द्वारिका, अनिरुध अंश भुवार ॥
दोऊ उपजो मर्म अब, जस हंसनकी ज्वार ॥

चौपाई

दिवस आठ दस बीते जबही । अनिरुध कुँवर प्रगट भयो तबही ॥
बानासुर ने क्रोध दल साजा । अगणित बाज सम्हर को बाजा ॥
युद्ध करें दैत्य तहँ जाई । अनिरुध सब कहँ मार हटाई ॥
छै प्रकार जीतो उन जबही । सातई बार भर्म भयो तबही ॥
दैत्य मार गहि समर अपारा । बांध चपल के कृष्ण कुँवारा ॥
कोई कहै मारो विषको मूला । शत्रु राखकै नृपकस भूला ॥
मंत्री कहई सुना भुवारा । शिव की आज्ञा मैं यह मारा ॥
नारद ऋषि तबही सुधि पाई । कृष्णहि बात जनावहु जाई ॥
चल भयो कृष्ण जो क्रोध अपारा । दैत्य जहां तहँवा पग्रु धारा ॥

साखी-गरुड़ चढ़े तब कृष्ण सो, पुरही पहुँचे आय ॥
जाही नग्र अग्नि दियो, दैत्य राज तिहि ठायँ ॥

चौपाई

आय दैत्य करै संग्रामा । हरि भेटें तेहि यम उन ग्रामा ॥
मारो हलधर अगिनित वीरा । बानासुर देख परे तेहि भीरा ॥
मोरा कृष्ण मता सुन आजू । अटल दियो महि शंकर राजू ॥
बहु विधि युद्ध दैत्य तब कीन्हा । कृष्ण चपल तेहि बांधहि लीन्हा ॥
बांध्यो नृप शंकर सुधि पाई । क्रोधित आइ तब कृष्ण लराई ॥
दोनों वीर महा बल धारी । लागी होन परस्पर मारी ॥
दोनों मंत्र पुनि दीन अडाई । तारी मार मार पुन धाई ॥
दोइ जुरे पुन मल्ल समाना । कौतुक आइ निरंजन जाना ॥
दोउके समर पावक उठि जबही । आदि भवानी चलभइ तबही ॥
दोनों सुत कहँ जब बिलगावा । बादल पवनके जैसे स्वभावा ॥

साखी-दोई सुत तब बरजी, आदि भवानी आय ॥
बर ऊषा अनिरुद्धको, शंकर दीन्ह मिलाय ॥

चौपाई

चले कृष्ण और सुत भामिनि । तासु अंग चमकै जिमि दामिनि॥
कृष्ण द्वारिका पहुँचे जाई । सो वृत्तान्त कहौं समुझाई ॥
जोपै हर हरिको व्रत धरई । प्रभु सेवक कहु काहे लरई ॥
प्रभु सेवक कहु कैसे लड़ाई । सो गति मोहि कहौ समुझाई ॥
हरि हर युद्ध सबै कोइ जाना । सहस नाम किमि करब बखाना॥
यमराजा जु ठगौरी लायी । ज्ञान देख कर चेतो भायी ॥
बूझौ सब मिलि पाखंड धरमा। मैं जानौं भल कालही मरमा ॥
अदेख देख सब कहि समुझाई । ताँको विरला जन पति आई ॥
साखी-शङ्कर कियो युद्ध हरिसों, तब कहु कैसो दास ॥
पंडित जन सब थापहीं, सहस्र नाम विश्वास ॥

चौपाई

चारौं वेद को मूल बताऊँ । सहस्र नाम को सार बुझाऊँ ॥
काशीमें विश्वास जनावई । विश्वनाथके मंदिर धावई ॥
विश्वनाथको भेद बतावहु । सार ग्रन्थ मोही समझावहु ॥
सबै ग्रन्थ करि आगिल कीन्हा । भक्ति तत्त्व सबै मिलि चीन्हा॥
सब पर सहस्र नाम परवाना । जहँ लग शास्त्र रु वेद पुराना ॥
तेहि जानै जेते सब कोई । बूझै मरम जु विरला कोई ॥
बूझौ पंडित भेद बताई । प्रभु सेवक कहु कैसे लराई ॥
यह सब बन्ध बहुत मैं भाखी । ते यमराजा सब ठग राखी ॥
ज्यों नारी पिय को व्रत तजई । दूजे जु प्रेम प्रीति सों भजई ॥
तैसो देखो यह संसारा । नाम बिना किमि उतरे पारा ॥
साखी-भूल परी सब दुनियां, पाखंडके व्यवहार ॥
मूल छांड़ि डारै गहै, कैसे उतरै पार ॥

चौपाई

तब हरि कीन्हे चरित अपारा । सो अब भाखौं अगिल व्यवहारा ॥
पांडव पांच सेवा बहु करई । तिन सों कृष्ण हेतु बहु धरई ॥
मारन तासु को मतौ बिचारा । पांडव कौरव नृप दोइ मारा ॥
दोनोंमें छल कियो भगवाना । ताको मर्म काहु नहिं जाना ॥
बंधु विरोध वैर उपजाई । प्रतिदिन समर करें तहँ आई ॥
राजा द्रुपद स्वयम्बर ठाना । तहँ पारथ राहू संधाना ॥
दुर्योधन अस कीन्ह उपाई । कन्या मारि लेव पांचों भाई ॥
कृष्ण ताहि छल मत उपजावा । तातें ताहि पांच पति भावा ॥
तेहि मारन हरि मतौ बिचारा । गीता कह अध्याय अठारा ॥
कौरव आइ जो करहि लड़ाई । ताहि कृष्ण छलसे मरवाई ॥
मार्‍यो करण गंगसुत द्रोना । सबको मारि कियो दल सूना ॥
मार्‍यो दुर्योधन जो राई । अठारह क्षोहणी मार गिराई ॥

साखी-पांचों पांडव बचि रहे, औ जूझे सब झार ॥
धरमराय अस कीन्हा, कृष्ण परी हंकार ॥

चौपाई

चल भये कृष्ण स्वर्ग अस्थाना । शून्यआदि जहँ शशिनहिं भाना ॥
पुर वैकुंठ ते आगे गयेऊ । तहां जाइके स्तुति कियेऊ ॥
अलख निरंजन अंतर्यामी । सब तें न्यारे हौ तुम स्वामी ॥
सबमें व्याप्त निरंजन राया । पांचो तत्त्व शून्य उपजाया ॥
तुमही ब्रह्मा विष्णु महेशा । आदि अंत तुम देव गणेशा ॥
अहो कृपालु कृपानिधि स्वामी । करहु दया तुम अंतरयामी ॥
ततक्षण भई अकाशतें वाणी । अहो कृष्ण सबको उतपानी ॥
अब जो कहैं करो सो जानी । सोई वचन लेव सिर मानी ॥
तुम भेजा महि भार उतारहु । असुरनको विध्वंसके मारहु ॥

साखी–मारहु जादव वंश कहँ, मानो वचन रसाल।
गोपी जाय संहारो, तेहि पाछे तुव काल

कृष्ण वचन–चौपाई

कृष्ण कहै सुनु पुरुष पुराना। काल अभै कहां मोर ठिकाना॥

निरंजन वचन

तैं मम अंश मोहिमें बासा। काल रूप संसार निवासा॥
पातक जीव जो रहै महाबल।मारहु तिनिही तुम अतिबल छल॥
उपजत विनसत क्षीन भइ देहा। कलियुग आवै क्षीण सनेहा॥
क्षीण शरीर अवधि भइ थोरा। पूजी अवधि आई कै तोरा॥
जस कछु कहो किया सो चहिहौ। जाको दिया राज महि करिहौ॥
छाड़ो महि मंडलको भाऊ। जगन्नाथ में कष्ट बनाऊ॥
तजो कृष्ण अब बेग शरीरू। आये अत्र अब दास कबीरू॥

कृष्ण वचन

साखी–सुन कियो कृष्ण अचंभो, कैसो दास कबीर॥
सो मोहि स्वामी कहब सब, तब मैं तजों शरीर॥

निरंजन वचन–चौपाई

कली अनेक राज है मोरा। कलियुग नरहि अवधि है थोरा॥
पांडव नंदन यज्ञ जो ठानहि।ऋषिगण सबही निवतजु आवहि॥
यज्ञ पूर्ण नहिं ताकर होई। नाम प्रभाव कहै नहिं कोई॥
कलि उत्पन्न मनुष्य शरीरू। जा कहँ सुनियो दास कबीरू॥
तिनके शिष्य सुपच जो होई। पूरण यज्ञकर ततक्षण सोई॥
या सहिदानी तोहि बताऊँ। तोहि सेती महि मंडल छाऊँ॥
बालिही राम रूप तुम मारा। ताकर होई व्याध औतारा॥
ताकर बैर देहुँ तुम जाई। फेर जीव कछु संशय नाई॥
सुनिके कृष्ण चले सिरनाई। नगर द्वारिका पहुँचे आई॥

पांडव निवते यज्ञ पठाये । चलिये स्वामी बेग बुलाये ॥
मारन बंधु या क्रिया लागा । तातें यज्ञ रची है रागा ॥
चल भये कृष्ण बार नहिं लाये । पुर पांडव के आश्रम आये ॥
आवत समाधान नृप कीन्हा । छत्र तानि सिंहासन दीन्हा ॥
आवत कृष्णसभा सिर नावा । भोजन को तब आज्ञा पावा ॥

साखी–बैठे गन्धरव देव गण, ऋषि मुनिवर सब झार ॥
सब मिलि कीन्हा भोजन, इच्छा के अनुसार ॥

चौपाई

भोजन भये घंट नहिं बाजा । राय युधिष्ठिर को भयी लाजा॥
अहो कृष्ण का करौं उपाई । सो मोहि स्वामी कहिये समुझाई॥
जबहि कृष्ण अस भाव बताया । सुनहू मंत्र युधिष्ठिर राया ॥
खोजहु भक्त जो निर्गुण गावयी । सतगुण महिमा सदा बतावयी॥
आनब ताहि यज्ञ निवताई । दीन भाव कर ताहि लिवाई ॥
कृष्ण वचन सुनि युधिष्ठिर राया। भगत बुलावन दूत पठाया ॥
सुनिके दूत चले चहुँ देशा । नहिं कोइ भक्तन भेंटें वेशा ॥
चले भीम तब लागि न वारा । चहुँ दिश फिर काशी पगुधारा॥
बैठे सुपच ताहि सों कहई । निर्गुन भक्त यहां कोइ रहई ॥
कहै सुपच निर्गुन को जानों । सतगुरु महिमा सदा बखानों ॥

साखी–कहै भीम सुन हरिजन, कृपा करौ मम संग ॥
चलो जहां हरि बैठे, स्वामी बाल गुविन्द ॥

चौपाई

कहै सुपच प्रभु कैसे कहऊ । कालहि जान कृष्ण परिहरऊ॥
सुनतहि भीम कोप तब कीन्हा । यामैं कहा भक्त वर चीन्हा ॥
यहि मारो तो राख रिसाई । कह्यो मंत्र राजा पर जाई ॥
तीन लोक के जे प्रभुराई । तिनको भाखे काल कसाई ॥

कृष्णहि कहै काल की फांसी । कीन्ही आय भक्त की हांसी ॥
मारचो नहिं पर तुव भय माना । यह सुनकर बिहिसे भगवाना ॥

साखी-जाव युधिष्ठिर वेग दै, तुम आनो गहि पांय ॥
आज्ञा मानि चले तब, आये युधिष्ठिर राय ॥

चौपाई

अहो संत तजिये अपराधा । अधम उधारन सुनियत साधा ॥
चलो स्वामी मेरे गृह आजू । कृपा करौ मम होवै काजू ॥
कहैं सुपच सुन पांडव राऊ । तोर का काज होय वहि ठाऊ ॥
तुम्हरे गये होय मम काजा । परमारथ तुम को बड़ साजा ॥
चल परमारथ कारण संता । सभा माहिं बैठे हरषंता ॥
आवत स्वपच कृष्ण जब जाना । होय काज पूरण सनमाना ॥
राय युधिष्ठिर पखारे पांऊ । भोजन सादर आन जिवाऊं ॥
भोजन करके सुपच भयो ठाढा । बाज्यो घंट शब्द भयो गाढा ॥
बाज्यो घंट यज्ञ भयो पूरा । कौतुक देखि ऋषीगण भूला ॥
पूरण यज्ञ विष्णु जब जाना । तबही कीन्ह द्वारिका पयाना ॥

साखी-बूझो रे नर परानी, क्या सुपचे अधिकार ॥
गण गन्धर्व मुनि देव ऋषि, सब मिलि कीन्ह अहार ॥

चौपाई

सब के खाये घंट नहिं बाजा । धर्म की देह युधिष्ठिर राजा ॥
सो सब रहे पूर्ण यज्ञ नाहीं । नामहि महिमा जानत नाहीं ॥
सुपच जान भल नाम प्रभाऊ । तातें पूरण यज्ञ कराऊ ॥
कृष्ण शक्ति में मुनि ऋषि झूला । जान बूझिकै पंडित भूला ॥
बूझौ सन्तो नाम हमारा । नाम विना किमि उतरौ पारा ॥
कृष्ण पारथ ही वेग बुलावा । तेहि पुनि निज मतौ सुनावा ॥
गोपी लैकै जाऊँ मैं जहँवा । पुर वैकुंठ सुमेर है तहँवा ॥

मथुरा तैं तुम वेग लै आवहु । जाहु तुरन्त गहर जनि लावहु॥
चल भयो पार्थ हाथ धनु तीरा । गोपी लैन कोटिन यदुबीरा ॥
आपस में जो करे लड़ाई । इक मारे एक मरजाई ॥
छप्पन कोटि जो सबै सिरानो । सो नट षट कृष्णहि के जानो॥
अष्ट कन्या लखी चित्रसारी। तिनकहँ कृष्णजो यहि विधि मारी॥

साखी—मारिन सब जेती हती, कृष्ण काल बरि यान ॥
तब अपने मन में गुनो, करो उदधि अस्थान ॥

चौपाई

वधिक देव घात संधाना । बालि बैरको भाव जो जाना ॥
जम सब प्रान घेर लै गयेऊ । मार्‍यो कृष्ण मूर्च्छित भयेऊ ॥
निरंकार निरंजन राऊ । आपहि मारिजो ताहि नसाऊ ॥
बालि का बैर ब्याधा जबलीन्हा। यह तो भेद न काहू चीन्हा ॥
तीन लोक के कृष्ण भुवारा । रहै न बैर जीव व्यवहारा ॥
जो जीव आप स्वारथहि मारा । सोजीव अपनौ किमि निस्तारा ॥
तबहि कृष्ण अस मता विचारा । तत्त्व मता अस रूप संहारा ॥
जादव रूप कृष्ण सब मारे । पारथ बान रहे सब हारे ॥
गोपी रही जो प्राणहि प्यारी । तिनको कृष्ण येहि बिधि मारी ॥
आये कृष्ण पहँ अर्जुन बीरा । लाज न छांड़े अत्र शरीरा ॥

साखी—कहैं कृष्ण सुन अर्जुन, छाड़ो यहि संसार ॥
हम तो जात हैं स्वर्ग को, इत परपंच अपार ॥

गये पारथ जहँ चारौं भाई । चलौ वही जहँ यादो राई ॥
कहै सन्देश सुनौ हो राऊ । यहवाँ मोर दरश नहिं पाऊ ॥
मृत मंडल नहि मेटव मोही । छाड़ौ महि बोलों अस तोही ॥
छाड़ौ राज पाट सब भाई । पुत्र राज देऊ सब जाई ॥

चारेउ पांडव काल बश भयेऊ । राय युधिष्ठिर सदेह तब गयेऊ ॥
ता कहँ बड़ शासन जो कीन्हा । नाम विना देखो अस चीन्हा ॥
देखत कृष्ण अपन तन त्यागा । चिता तासु की रचन जो लागा ॥
चन्दन काष्ठ तासु तन जारा । चल भयो काष्ठ समुद्र मझारा ॥
इंद्र देवन हरि सपना दयेऊ । तिन पुनि काष्ठ आन धरि लयेऊ ॥
मूंघायो द्वार काहु नहिं जाना । ठक २ उठै दिन रात प्रवीना ॥
शिशुपाल भुजा चार रहो जाही । मार्‌यो कृष्ण जो भक्ष्यो ताही ॥

साखी–सबै अंग सम्पूर्ण हैं, जगन्नाथ को भाव ॥
शिशुपाल की भुजा उखारी, ताको वैर दिवाव ॥

चौपाई

दोइ भुजा काष्ठ जेहि उरेहा । बैर न छूटे सो गहि देहा ॥
जो काइ जीव जोर कर मारा । तासु जन्म किमि हो निस्तारा ॥
राम कृष्ण तैं को बड़ आही । बैर घात तासों न रहाही ॥
कृषी करै किसान जस भाऊ । ऐसी दसों जनम निर्माऊ ॥
दसों जनम ऐसे ही बीते । तासों कहै कि मुक्ति करीते ॥
बूझो नहि चरित्र भगवाना । तीन जुग गये काल नियराना ॥
है बड़ ठाकुर ज्योति स्वरूपा । तिन सब रच्यो मही औ भूपा ॥
आप स्वार्थी तिनहू मारे । ज्यौं नकटी विश्वासहि वारे ॥

साखी–जिस सिरदार मही को, करै चरित्र भुवार ॥
जहँ तहँ शील पटावै, मल्ल बली तब धार ॥

चौपाई

कलियुग अन्त मलेच्छ व्यवहारा । तब हरि निष्कलंक अवतारा ॥
मारहिं मलेच्छ सबै पुर कैसे । पावक मध्य तृण है जैसे ॥
पावक रूपनि कलंक अवतारा । तृण समान मलेच्छ संहारा ॥
बहुर कलंकी ज्योति समाई । कौतुक करै निरंजन राई ॥
ऐसे दसों जन्म निर्माये । निरंकार पुनि ताहि सताये ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कहैं सुनौं गुसाईं । दसों जन्म कहि मोहि सुनाईं ॥
कलप अनेक निरंजन राजा । आगे कैसा करि है साजा ॥
सो सब स्वामी मोहि जनाओ । उत्पति प्रलय भाव बताओ ॥
उत्पति प्रलय सुनौं तुम पाहीं । कहौ सबै जो संशय जाहीं ॥

साहिब कबीर वचन

चारौं युग हैं रहट स्वभाऊ । सो अब तोहि कहौं समुझाऊँ॥
चारौं युग अंत जब होई । वर्षै अग्नि निरंजन सोई ॥
पृथ्वी जार करै सब पानी । रहै स्वर्ग सो कहौ निशानी ॥
रहै जो देव तैंतीस करोरी । रहै जब तपसी तपकी जोरी ॥
चन्द्र सूर्य तारागण झारी । जबही देह तजै मुख चारी ॥
विष्णु बीतहीं दस अवतारा । नहिं शिव बीत योग जो धारा॥
यहि विधि बहत्तर चौकड़ी जाई । सेवा फल पावै अन्याई ॥
उत्पति करै पुन प्रथम स्वभाऊ। ऐसे भवसागर निर्माऊ ॥

छंद-महा प्रलय जब किया निरंजन अग्नि सेवत ना रह्यो ।
लोमस ऋषि तब होय अंतहि शशि भानु पानी सब गयो॥
तीन गुन पांच तत्त्व बीते दस चार सुत आकाश हो ।
महा देवी आदि कन्या ताही करै वह गरास हो ॥

सोरठा-सब भक्षै निरंजन राय, आदि अंत ना कछु रहै ।
शिव कन्यानाम बिहाय, सब जी राखै आपमें ॥

चौपाई

सतगुरु दया जाहि पर होई । नाम प्रताप बाचे जन सोई ॥
निज घर हंसा करहि पयाना । और सकल जीव तहां समाना॥
जाई रहैं जहां धर्महि द्वीपा । प्रथम करी जो लोक समीपा ॥
उत्पति कारण सेवा करहीं । पुनि यहि भांति सृष्टि अनुसरहीं॥

भक्त अभक्त सबै पुनि खाई । सबको भक्षै निरंजन राई ॥
सो पुनि महिमा वेद बखाने । वेद पढे पर भेद ना जाने ॥

छंद-जेहि को भरोसा सोई चुरावै कहो तब कैसी बने ।
सेवा करैं जेहि पुरुषकी सो भक्षण प्रति दिन करै ॥
जानी कै बूझै नहिं केतो कहो समुझाय हो ।
आदि अंत सबै ग्रसै अस निरंजन राय हो ॥

सोरठा-काल सबनको खाय, हरि हर ब्रह्मासे सबै ।
बाचै कौन उपाय, एक नाम जाने बिना ॥

धर्मदासवचन-चौपाई

धर्मदास टेके गहि पाऊ । हे स्वामी मोहि भेद बताऊ ॥
कैसे आयो यहि संसारा । सो कहिये मोसों व्यवहारा ॥

साहब कबीर वचन

सत्य युगमें कबीर साहबका पृथ्वी पर प्रगट होना

सुन धर्मनि मै तोहि बताउं । लोक छोड़ि मै इहँवां आउं ॥
सतयुग सत सुकृत मम नाउं । सोई सबै तोहि समझाउं ॥
हंस उबारन आयेउ जबही । मथुरा नगरहि पहुँचे तबही ॥
गुरुमठ मांझ जो आसन कीन्हा । रह्या अंत मोहि काहु न चीन्हा ॥
कहौं भक्ति बहु भाति दृढाई । बिन अंकूर न जीव जगाई ॥
बिबसी नाम रहै इक नांरी । ज्ञानवंत औ वरण कुँमारी ॥
तासों कहो भक्ति परमाना । बिबसी सुनै अचंभौ माना ॥

बिबसी वचन

साखी-अचरज कही तुम स्वामी, लोक वर्ण उजियार ॥
पहिले लोक दिखाओ, पीछे हो इतबांर ॥

---

१ रानी-ऐसा भी पाठ है। २-विश्वास

चौपाई

तब हम मता अस कीन्हा । ताके शीश हाथ जो दीन्हा ॥
परसत शीश ताकर भय भागा । शून्य मंदिरमें मुहरा जागा ॥
देखत सुरति निरति सौ लोका । बिबसीका मेटचो सब धोखा ॥
हे स्वामी अब कीजे दाया । यमके घरसे जीव मुक्ताया ॥
बार अनेक विनय तिन कीन्हा । तब हम नाम लखाई दीन्हा ॥
भक्ति भावसों करै अनंदा । ज्यों चकोर पाये निशि चन्दा ॥
ताके गृह निंदक सब रहई । बिबसी देखत ही पर हरई ॥

साखी—जाके पाछे हंस जो उबरे, तिनहिको जो बताव ॥
हंस ग्यारह आयऊ, गुरुसे कीन्ह भिटाब ॥

चौपाई

तिन कह सत्त शब्द जो दीन्हा । परम पुरुषके दर्शन कीन्हा ॥
तब उठि गयो पुरुषके ठाऊँ । सतयुग सत सुकृत मम नाऊँ ॥
आवत जात लखे नहिं कोई । आज्ञा पुरुषकी जापर होई ॥

त्रेतायुगमें कबीर साहबका प्राकटच

चौपाई

त्रेतायुग आयो पुनि जबही । युग अनुमान चलो मैं तबही ॥
नाम मुनींद्र धरो निःशंका । प्रथम जाय देखेउ गढ़लंका ॥
द्वारपाल सों कहि समुझाई । राजाको ले आव बुलाई ॥
सुन प्रतिहार कह अस वानी । रावन मरम सिद्ध नहिं जानी ॥
महा गर्व कछु गिनै न आनो । शिवके बल कछु शंक न मानो ॥
मारहि मोहि कहौं जो जाई । गर्व प्रहारी है रावन राई ॥

मुनींद्रवचन

जाहु तुरत कहा सुन मोरा । बार बंक नहिं होवहिं तोरा ॥
प्रतीहार जब बात सुनाई । सिद्ध एक है ठाढ़ गुसाई ॥
सुनिनृप क्रोध अनल सम कीन्हा । प्रतीहार तुम मति अति हीना ॥
भिक्षुक एक जो मोहिं बुलावै । शिव सुत मार दरशनहिं पावै ॥

साखी-कहा रूप तेहि ऋषीकर, मोहि कहो समझाय ॥
जो मांगे सो देव वहि, लेइ बहुर घर जाय ॥

चौपाई

हे प्रभु आहि सेत जो भाऊ । सेत अंग जैसे शशि राऊ ॥
माला तिलक बदन है सेता । कहै नृपति कोई आहि अजेता ॥
मन्दोदरि कहै सुनो हो राजा । ऐसा रूप और नहिं छाजा ॥
सेत रूप महिमा मैं जानौं । निश्चय है कोई पुरुष पुरानो ॥
जाई तुरन्त गहौ तुम पाऊ । होऊ अकल सुन रावन राऊ ॥
दस सिर बचन सुनत पर जरेऊ । जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
चलि भयो असुर अनिलसमचीन्हा।बहुत बेग मनमें अस कीन्हा॥
सत्तरवार खड्ग सो चलावा । तब हम ओट तृणकी लावा ॥

साखी-तृण ओट जेहि कारणें, गर्व परिहरौ राव ॥
तृण जबही ना टूटयो, राजहि शोक जनाव ॥

चौपाई

कह मन्दोदरि गहि मम पाऊ । गर्व न छाड़ रावन राऊ ॥
शिवकी सेव करै मन मानी । अटल राज दीन्हा तिन ठानी ॥
तब चलत हम कही अस बाणी । मूढ़ नृपति तुम मर्म न जानी ॥
सुनु रावण जो लंक मझारा । सब कहँ रामचन्द्र जो मारा ॥
काहू मुक्ति गम्य नहिं पाई । तातें मै कछु कहों बुझाई ॥
तो कहँ भक्षहि काल अन्याई । काचा मास स्वान जिमि खाई॥
काल भक्ष जिव सबहि निदाना । अधिक तोर कछु मरदै माना ॥
अगिला जन्म तोर होइ जबही । भक्षी कृष्ण देख पुन तबही ॥
उनसे करिहो बहु अभिमाना । ताकर तोहि कहा परवाना ॥
तृण नहिं टूटो बल तुम बूझा । आगे कहा तोह बल सूझा ॥
वालि नाम इक कपि जो होई । रख छह मास तोहि कहँ गोई ॥
तिनकी कांख रहिहो छै मासा । ऐसा कहँ पग कीन्ह प्रकाशा ॥

साखी-रावणको अपमान करि, अवध नगर चलि आय।
दशा सन्त की जान कै, मधुकर पकरै पाय ॥

प्रसंग-चौपाई

नमस्कार कर गहि लिये पाऊं। बाल गोपाल चरण तर नाऊं ॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना। तासों लोक संदेश बखाना ॥
तिन कीन्ही विन्ती बहुवानी। हे प्रभु देखों लोक सहिदानी ॥
लैकर चले पंथ तेहि जहँवा। पांजी एक रहे धर्म तहँवा ॥
देखि ताहि दौरे यम दूता। कहां ले चले विप्रको पूता ॥
कहँ मुनींद्र सुनो यमराई। इनको जिन रोकौ तुम आई ॥
जाकर दूत जाव तेहि पासा। पाछे करो बैर की आशा ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव आज्ञा देहीं। तीन लोक महँ जिव गहि लेहीं॥

साखी-छोड़ देव यह मारग, तुम अब आहू कौन ॥
यहां कोई नहिं आवै, तुम कह करत हो गौन ॥

चौपाई

तब मुनींद्र अस बोले लीन्हा। होहु दूत तुम सब बलहीना ॥
शब्द प्रमाण न होई बल थोड़ा। दूतन जीत गये महि ओरा ॥
तिनको दिव्य दृष्टि कर दीन्हा। तहँवा जाय लोक तिन चीन्हा ॥
देखि स्वरूप सुरंग अपारा। झलके जोत जहां उजियारा ॥
देखत मधुकर बहुत प्रतीती। हे स्वामी तुम यम कहँ जीती ॥
मो कहँ दीजै शब्द दृढाई। जेहिते हम परम पद पाई ॥
अति आधीन देखा मैं जबहीं। नाम दृढाय दियो तेहि तबहीं ॥
अति आधीन जो बोलस्वभाऊ। मोरे गृह अब धारो पाऊ ॥
ताके गृह आयो मैं जबहीं। सोरा जीव शरण भये तबहीं ॥

साखी-मधुकर जेते जीव सब, लोकहिं कीन्ह पयान ॥
तातें नाम मुनींद्र कहि, जीव सत्त दियो दान ॥

चौपाई

तब हम गये आप सुख सागर। अभय पक्ष जहँ नाम उजागर॥
विन्ती दंडवत कीन्ह अनेका। पुहुप द्वीप द्वीपन को थेगा॥
क्रीडा विनोद होत बहु भावा। द्वापर युग धर्म न नियराया॥

द्वापरमें कबीर साहिबका प्राकट्य

आज्ञा पुरुष दीन्ह मोहिं सारा। ताते बहुरि नाम उर धारा॥
करुणा मय मम नाम प्रकासा। बहु जीवन कहँ छुड़ायो फांसा॥
आयो जहँ चन्दबिज बड़राऊ। गढ़ गिरनार नगर तेहि ठाऊ॥
ताकी नारि रहै व्रतधारी। पूजै साधु कुल लाज विसारी॥
तिन पुनि सुधि सो हमारी पाई। लैगयी बहु विधि तुरत लिवाई॥
आई चेरि बिन्ती कीन्हा। तुव दर्शन रानी चित दीन्हा॥
मैं नहिं राजा रावकर जाऊं। उठ रानी आपहि चलि आऊ॥
नमस्कार कै कहि अस बानी। मोरे गृह पगु धारौ ज्ञानी॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना। राजा गृह तब कीन्ह पयाना॥
रानी कह उपदेश जो दीन्हा। राजा कर कछु शंक न कीन्हा॥

साखी-एक दिवस जो रानी, बूझा मता अपार॥
कहा मता तुम ज्ञानी, सो कछु कहो विचार॥

रानी इन्दुमतीका कबीर साहबसे ज्ञान चर्चा करना-चौपाई

तासो कह्यो सुनौ हो रानी। अधरहिं रहों नाम मम ज्ञानी॥
जो कोइ माने कहा हमारा। ताको पठऊं जम सों न्यारा॥
कहे रानी मोहि कीजे दाया। जातें नहिं हते यमराया॥
बहुत भांति तत्त्व जो चीन्हा। बहु विधि विन्ती मुक्ति अधीना॥

कृष्ण-विष्णु-व्यवहार

सोवत कृष्ण स्वप्न इक देखा। बहु वैकुंठ सेत जनु रेखा॥
उग्यो बादल सेतहिं फूला। सपना देख कृष्ण मन भूला॥

अहो ब्रह्मा मैं सपना देखा । बादल उमंग पहुप की रेखा ॥
सोवत देखा पुरमें अपना । ब्रह्मा वेद देख कहु सपना ॥
रास वर्ग गनि मोहि बताओ । जेहि ते जीवका भर्म मिटाओ॥
तब पुनि ब्रह्मा वेद विचारा । पुनि भाष्यो ताकर उपचारा॥
सुनो विष्णु समझाऊं तोही । यही आज्ञा भयी सो मोही ॥

साखी–है कोई ज्ञानी जीव बड़ा, तेहि कारण प्रभु आव ॥
दूत ताहि नहिं पावई, सत्त पुरुष सुन नाव ॥

चौपाई

सुनिके विष्णु अचरज मन कीन्हा। ब्रह्मा सों तब बोले लीन्हा ॥
सोइ करौ जो जीव न जाई । राखौ ताहि महि भरमाई ॥
सुनिके ब्रह्मा मतौ विचारा । तक्षक रूप दूत पशु धारा ॥
यह सब भेद जबै हम जानी । इन्दुमती सो आज्ञा ठानी ॥
काल रूप तक्षक को आही । डस है तोहि जो कष्ट जनाई ॥
बिरहुलि शब्द गहो मन लाई । यमको दूत जीत नहिं जाई ॥
रानी शब्द बिरहुली पाई । ता कहँ तब प्रतीति मन लाई ॥
बहुविधि सुमरै शब्द अघाई । काल घरी निकटै ह्वै आई ॥
चारौ दूत पठाव यम राऊ । गढ़ गिरनार बेग चल आऊ ॥

साखी–रानी भक्ती लीन्ह मन, काल न पावै दाव ॥
साध चले घर आपने, रानी मस्तक नाव ॥

चौपाई

राजा रानी दोई शिष्य मोरा । रानी लीन्ह राव मति भोरा ॥
तब यमदूत मता अस कीन्हा । चित्रसारमें पहुँचे लीन्हा ॥
रानी चली सिज्या पर जबहीं । तक्षक ग्रास भर्म भयो तबहीं ॥
रानी कहे डस्यो मोहि सांपा । राजा कियो कठिन संतापा ॥
मंत्री गुणी सब तुरत बुलाये । राजा आज्ञा सों सब आये ॥

रानी शब्द बिरहुली भाखा। दूर दूर सबहिन को राखा ॥
रानी क्रोध बहुत तब कीन्हा। बहुत होय नृप अति आधीना ॥
अरे भाई मम प्राण प्यारी। यही बार तुम लेव सम्हारी ॥
मूर्छित रानी सब चलि आये। जाग्रत जान के सबै सिधाये ॥
तक्षक विष नहिं लाग्यो नारी। अंतक दूत रहे सब हारी ॥

साखी-रानी उठि ठाढ़ी भई, राजहि हरष अपार ॥
सुमिरन हम को कियो, धन्य है गुरू हमार ॥

चौपाई

तक्षक राव तब आये जहवां। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तहवां ॥
विष को तेज शब्द सों जीता। सुनिके विष्णुहिं भयी तब चिंता॥
धर्मराय का तुरत हंकारा। यम दूतन को जो सिरदारा ॥
ताका हरि अस मता सुनावा। करियो सबै तुम सेतहि भावा ॥
आने छलिकैं जो नृप नारी। निश्चय आज्ञा आहि हमारी ॥
सुनिके दूत भेष कियो रंगा। अपन कीन्ह सब सेतहि अङ्गा ॥
आये दूत नगर नियरावा। रानी ऐसा सपना पावा ॥
आये गुरू ज्ञानी जो हमारे। बोलत अमृत वचन सुधारे ॥

ज्ञानी वचन

सुन रानी तोहि भेद बताऊं। काल चरित्र सब तोहि सुनाऊं ॥
छलबे अइहैं ताहि सम्हारो। सेत रूप जिन भाव विचारो ॥

साखी-मस्तक ऊंचा कालका, चित्तमें गुणका रंग ॥
यही चिह्न तुम चीन्हियो, और सेत सब अंग ॥

चौपाई

भये प्रभात काल तब आवा। सेत रूप सब अंग बनावा ॥
आये जहां तहां नृप नारी। तिनसौं ऐसो बचन उचारी ॥
चीन्हत है कै नाही रानी। मरदन काल आइस मैं ज्ञानी ॥

मैं तो तोकहँ दीक्षा दीन्हा। तक्षक डसै तोहि कहँ लीन्हा॥
तब तोहि मंत्र दियो मैं सोई। कालको अजय जाहिते होई॥
तें पुनि तैसो तत्त्व विचारा। हर्षत भये तब धनी तुम्हारा॥
बेगी चलो गहर जिन लाओ। प्रभु को दरस तुरत तुम पाओ॥
इंदु मती सपना जो देखा। बैसो देखो ताकर रेखा॥
तीनों गुण चक्षु में राता। और पुन देखो ऊंचा माथा॥
और स्वेत सब देख्यो अंगा। पाइ प्रतीत स्वप्न परसंगा॥
अरे काल तैं क्या ठग मोही। हंस रूप नहिं छाजै तोही॥
यह छल मता न लागु तुम्हारा। है समर्थ बड़ गुरू हमारा॥

साखी-मम गुरुकी परतीत यह, धरनी धरै न पांव॥
काग न होय मराल सम, यह छति तोहि न भाव॥

चौपाई

सुनिके दूत कीन्ह तब रोषा। इन्दुमती को दीन्ह सो दोषा॥
तिन पुनि सुमरे अपने स्वामी। भक्त हेतु चले अन्तर्यामी॥
ज्ञानी आवत काल पराना। ता कहँ लै पुनि लोक सिधाना॥
धन्य भाग तिन रानी केरा। ज्ञानी आय काल सों फेरा॥
रानी मानसरोवर आई। अमी सरोवर ताहि दिखाई॥
कबीर के सागर पांव परो जबही। सुरति सागरै पहुँची तबही॥
पहुँचत तासु हंस हरषाने। सब मिलि कीन्ह तासु सन्माने॥
सतगुरु दाया कीन्ही जबही। षोडश भानु रूप भयो तबही॥
भयो हर्ष रानी अति शोभा। राजा लग्यो करन अति क्षोभा॥
हे सतगुरु मै तुम बलिहारी। राजहि आनो पतहि हमारी॥
सतगुरु कहैं सुन संत सुजाना। राजा भाव भक्ति नहिं जाना॥
आ तोहि भयो हंसको रूपा। कारण कवन चहे तू भूपा॥

साखी-राजा भक्ति न जानही, तातें हंस न आव ॥
बिना तत्त्व नहिं हिरम्मर, हंस न होय मुक्ताव ॥

चौपाई

हे स्वामी मैं भव जब रहिया । राजा भक्ति न वरजै कहिया ॥
है संसार का ऐसा भाऊ । पुरुष पराय ध्यान नहिं आऊ ॥
जो कोइ राते त्रिया बिरानी । ताकी करै सबै मिलि हानी ॥
छोटे बड़े को यह व्यवहारा । धन्य नृपति जिन ज्ञान बिचारा॥
करों साध सेवा मैं जबही । राजा मोहि न बरजै कबही ॥
जो राजा अटकावत मोहीं । कैसे भेटत तब मैं तोहीं ॥
धन्य नृपति जिन भक्ति दृढावा । आनिय ताहि हंस पति रावा ॥
सुनि ज्ञानी ताही की बाता । चले तबहि तहँही बिहँसाता ॥
आये भवसागर जब ज्ञानी । यहां नृपति की अवध खुटानी ॥
आये लेन ताहि यमदूता । राजहि कष्ट जो देत बहूता ॥

साखी-हंस ताको नहिं पावे, घेर रहो जो राव ॥
राजा परो अगाध में, सतगुर को गुहराव ॥

चौपाई

राजा तत्त्व मता नहिं चीन्हा । ताते यम राजन दुख दीन्हा ॥
पावे यम नहिं छाड़े ताही । भक्ति योग जो ऐसो आही ॥
तब ज्ञानी आये तेहि ठाईं । देखत जीव बहुत संकाईं ॥
ज्ञानी लीन्ह जीव कर आगे । देखत दूत ताहि सब भागे ॥
दूत चहूँ दिशि देखत जावैं । मरकट दृष्टि पक्षि नहिं पावैं ॥
जस आकाश कहँ जाय परवेरू । मरकट दृष्टि आये सत हेरू ॥
ऐसे ताहि दूत गुहरावै । नहिं जब देखैं तब पछतावै ॥
जहां लगि गम तहँ लग हेरा । आगे देखा धुन्ध कुहेरा ॥
हंस गये जब लोक द्वारा । रूप अनूप देख उजियारा ॥
गये नृपति हंसन की पांती । ता मध्ये पुन जइस अजाती ॥

साखी–रानी चीन्हौं नृपति को, आन धरे तब पांव ॥
नृप मन में बहु संकुचे, लज्जा ताहि जनाव ॥

चौपाई

कह रानी सुन साधु भुवारा । चीन्ह नृपति मैं हौं तुम दारा ॥
इन्दुमती है मेरा नाऊँ । यहि कारण टेक्यो तुव पाऊँ ॥
राव कहे कि म करों प्रमाना । बर्ण तुम्हांरो हंस समाना ॥
शोभा बहु देखों तुम अंगा । कैसे तोहि कहों अर्धंगा ॥
हंस करुणामय वचन उचारा । निश्चय मानो वचन हमारा ॥
हंस रूप होवे नर नारी । जिन भवसागर भक्ति विचारी ॥
नृप को भयो हंस का भावा । जिन पुनि ऐसी शोभा पावा ॥
भुईं में रहें जो अंतक दूता । तिन पुनि विस्मय कीन्ह बहूता ॥
दूत चलि गये जहँ त्रिय राऊ । तिनसों जाय कह्यो सत भाऊ ॥
स्वामी श्वेत वरण यक आवा । रानी नृप लेइ लोक सिधावा ॥
कैसो लोक ब्रह्मा पर जरेऊ । जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
चलो हरी हर संग हमारे । जहँवा राजा रानी सिधारे ॥
चले बेग तब तीनों भाई । बाहन साज चले तिय राई ॥

साखी–सुम्मेरते ऊँचे गये, तब देखा अँधियार ॥
नव खंड महि तब छांड़िके, आगे को पगधार ॥

चौपाई

पहुँचे विषम सरोवर जाई । बिजुली हुओ ह्यां अन्याई ॥
ब्रह्मा शिव बाहन थकि गयऊ । सतगुन तेज विष्णु का भयऊ ॥
अलख निरंजन भयो तिहि ठाऊँ । औ देवी तें आशिष पाऊँ ॥
तेहि ते विष्णु गो अँमर जहँवा । कामिनि मान सरोवर तहँवा ॥
देखत रूप विष्णु मन भूला । श्वेत पुष्प पद्म जस फूला ॥
कामिनि मान सरोवर राजै । जुत्थ जुत्थ जोड़ भल साजै ॥

न अध्यान तहां तिन्ह लागी । सत्त सुकृत बोले अनुरागी ॥
सब मिलि भयो अचंभो बाता । ऐसा अचरज नरको बाता ॥
कोइ कहे नर देख परखेहू । ऊँची दृष्टि सबै मिलि हेरू ॥
बेग निकारौ यहांते आजू । रहन न पावे करौ सों काजू ॥

साखी-दोई सठहार जो भेजे, नर से कहो बुझाय ॥
छांडौ मान सरोवर, यहां नहीं तुव ठांय ॥

चौपाई

प्रतिहारन तब आज्ञा कीन्हा । तिन सों हरि अस बोलन लीन्हा ॥
देखा चाहों तुम पुर पाटन । हे प्रभु भेद कहो कछु आपन ॥
तब प्रतिहार कहें समझाई । नरको रूप दरश नहिं पाई ॥
जौ लग बीरा नाम नहिं पावे । सो जीव कैसे लोक सिधावे ॥
भयो जो बड़ो निरंजन राऊ । तेऊ यहां रहन नहिं पाऊ ॥
जा तू विष्णु कहा सुन मोरा । नातर चक्षु हीन होय तोरा ॥
चले विष्णु तब लागि न बारा । हरि कमलासो मंत्र विचारा ॥
यह कछु बात अचंभो आही । कहत न बने रूप मोहि पाही ॥
देख सठिहारन बेग निकारा । चले जीव जहां राज तुम्हारा ॥
अचरज बात कही नहिं जाई । धन्य पुरुष जिन लोक बनाई ॥
जब मैं ध्यान धरा प्रभु केरा । अलख रूप देखौं बहुतेरा ॥
ऐसा रूप कहूं नहिं देखा । अचरज भयो न जाय विशेषा ॥

साखी-चले ब्रह्मा हरि शंकर, छाडि लोकके खोज ॥
बस शशि के परभावतें, सकुचन होत सरोज ॥

कलियुगमें कबीर साहिबका प्राकट्य-चौपाई

सतयुग त्रेता बीत जब गयऊ । कलियुगको प्रभाव तब भयऊ ॥
छाड्यो लोक लोककी काया । प्रथमहि मान सरोवर आया ॥

पाँच तत्त्व तीन गुण साना । त्रिगुण रूप कीन्ह उतपाना ॥
रूप मनुष्य सुदेह सम्हारा । नहिं लेई अहार व्यवहारा ॥
जो कोइ ये विधि करै उछेदा । सो तो है करता को भेदा ॥
करता देह तबै निरमावा । तामहिं तत्त्व प्रकृतिहि स्वभावा ॥
आयो निरगुण काछ शरीरा । आवा गमनकी भेंटन पीरा ॥

जगन्नाथके मंदिरकी स्थापना

प्रथमहि आयो सागर तीरा । जगन्नाथ जहँ काष्ठ शरीरा ॥
जाते परम वचन मैं हारा । बाजी मांड किया प्रति पारा ॥
आसन वेल तीर मैं लीन्हा । सो स्वरूप काहू नहिं चीन्हा ॥
आया राम विप्रके रूपा । तासों कथि कह्यो अजगूता ॥

साहिब कबीर वचन

साखी-वाचा बंध मैं आइया, मंडप उठि है तोर ॥
मान त्रास सिंधू जबे, दर्शन देखौ मोर ॥

चौपाई

तो कहँ थापौं वचन प्रवाना । तीन लोक तुम करत बखाना ॥
तो परसै को कहा अधिकारा । सोई कहौ तुम बौद्ध विचारा ॥

बौद्ध वचन

मन वच क्रम परसै जो मोई । कोटि जन्म लगि विप्र सो होई ॥
औ पुनि विद्या औ धनवंता । यहि सुनकै जो भये हरषंता ॥

साहिब कबीर वचन

आवा गवन निरवारन आयो । सत्त शब्द ते जीव छुड़ायो ॥
जो बहु जन्म थाकौं तुहि पाहीं । कैसे जीव लोक तब जाहीं ॥
बिना नाम नहिं जीव उबारा । कहि अब भाखौं कछु उपचारा ॥
मारकंडे तर जाइ नहाई । अस हँस बोले त्रिभुवन राई ॥

अक्षैबट कृष्णरोहिणी अस्नाना। इन्द्र दमन समुद्र अस्थाना ॥
यहि विधि तीर्थकरै मन जानी। पुनर्जन्म ना होवै प्रानी ॥
साखी—हँसै कृष्ण छल मता कहि, जिमि माहुरको मीठ ॥
अस पुरुषोत्तम क्षेत्र फल, ज्ञानवन्त कहँ दीठ ॥

चौपाई

समाधान हरिको जब कीन्हा। आसन उदधि तीर में लीन्हा ॥
चौरा कीन्ह तहाँ पुन जाई। इन्द्र दमन तब आज्ञा पाई ॥
जबहीं मंडप काम लगावा। सागर उमँग खसावन आवा ॥
उठावहु मंडप करि निःशंका। उदधि त्रासकी मेटब शंका ॥
आयो क्रोध लहर जब पानी। मेटचो पुरुषोत्तम सहिदानी ॥
लहर उमंगी सागर तीरा। आय जहां तहँ सत्त कबीरा ॥
देखत दरस महा भय मानी। बोल्यो वचन जोर युग पानी ॥
हे स्वामी तुव मर्म न जाना। जगन्नाथ वर किया पयाना ॥
क्षमौ अपराध मोर प्रभुराया। लेउ बैर अस कीजै दाया ॥
तासों पुनि अस बचन उचारा। बोर द्वारिका बैर तुम्हारा ॥
साखी—राम रूप सागर बँध्यो, तातैं उदधि उमंग ॥
बोरौ नगर द्वारका, भयो रुचिर परसंग ॥

चौपाई

तब तैं उजर द्वारका भयऊ। पंडनको तब स्वप्ना दयऊ ॥
आये मोपर साहिब कबीरा। आवा गमनकी मेटन पीरा ॥
ऐसा स्वप्न पंडन दीन्हा। तीर्थ स्नान तेहि सब कीन्हा ॥
उठचो जो मंडप बाज बधावा। कनक उरे नहिं हाथ बनावा ॥
एक दिना कौतुक अस भयऊ। सागर तीर पंडा चलि गयऊ ॥
करि असनान चलो मंडप पासा। मनमें ऐसा वचन प्रकासा ॥
प्रथमहिं चौरा म्लेछ को गयऊ। ठाकुरके नहिं दर्शन कियऊ ॥

तेहिके मन पाखंड जब देखा । किय कौतुक सो कहौं विशेखा॥
जहँ लग मंडप पूजहिं बीरा । तहँ लग देखहि रूप कबीरा ॥
गयो जहां कठ मूरत आहीं । कबीरको रूप भयो तेहि पाहीं॥
अच्छत पुहुप लै विप्र मन भूला। नहिं ठाकुर जो पूजहु फूला ॥

साखी-तब पंडा सिर नायो, प्रभु चरित्र अवगाह ॥
क्रोध छोड़िये स्वामी, कृपा करो मोहि पांह ॥

चौपाई

अपने मन आन्यो प्रभु हीना । तातैं प्रभु तुम कौतुक कीन्हा ॥
तासौं बचन मैं बोलये लीन्हा । सो पंडा पुनि कही जो कीन्हा॥
सुनहु विप्र तुम्हे आयसु होई । दुबिधा भाव करौ मत कोई ॥
ब्राह्मण छाड़हु जात अजाती । ताते मेटब सबकी फांसी ॥
भोजन माहि भर्म जो करहीं । ताकी अङ्ग हीन अनुसरहीं ॥
तब पडा विन्ता अस ठाना । हे स्वामी मैं तोहि न जाना ॥
करौं सोई जो आज्ञा दीजे । कछु जांचों सोप्रदानमुहिकीजे॥
जो मन इच्छा होय तुम्हारी । देउ सोइ अस वचन उचारी ॥

साखी-सागर नीर बड़ खारा, सो तो ग्रसो न जाय ॥
निर्मल जल मैं मांगौं, सो दीजै प्रभुराय ॥

जहँ चौरा है सागर तीरा । खनहु कूप होय निर्मल नीरा ॥
तहां खनायो आय तब कीन्हा । जल मँगाय पंडन कहँ दीन्हा ॥
कूप बनायो सागर तीरा । तहां भयो पुनि निर्मल नीरा ॥
यह तो भेद जाने सोई संता । कबीर सागर बूझे मतवंता ॥
हरी भेद मैं सागर आयो । तेही सकल चरित्र सुनायो ॥
भृंगी को कीन्ही मैं दाया । ताको एक जो भेद बताया ॥
ताकी दियो मता कडहारी । जीव भेद सों लेत उबारी ॥

पठवै जीव नाम दे जहँवा । मुक्ति पदारथ फल है तहँवा ॥
चार भानु कामिन उजियारी । मान सरोवर है वह नारी ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कहै अस बानी । स्वामी कहु संत उतपानी ॥
हंस रूप जो षोडश भाना । कामिनि चार भानु परवाना ॥

साखी–कारण कौन है कामिनि, चार भानु कछु थोर ॥
शब्द गहे सब हंसा, संशय भई जब मोर ॥

साहिब कबीर वचन–चौपाई

सुन धर्मनि मैं तोहि बताऊँ । यह सब भेद मैं तोहि बुझाऊँ ॥
चौरासी लक्ष जोइन ठाना । मुक्ति छेत्र नरको उत्पाना ॥
तातैं प्रभु प्रगटे नर भाऊ । ताते शोभा हंस बहु पाऊ ॥
आय अदेह पुरुष रह जहँवा । नर को रूप प्रगट भये तहँवा ॥
जेहि मुक्ति चंदा निर्माई । हंस प्यार मुक्ति अधिकाई ॥
भृंगी कीट शिष्य जो होई । पावै भेद मग्न होय सोई ॥
सिंधु मध्य राह तिन केरा । आवै जीव ताहि सों फेरा ॥
वहै राह भृंग राज कहँ दीन्हा । यही भेद विरले जन चीन्हा ॥
पाहे भेद सन्त जन सोई । आन्यो सतगुरु जेहि गम होई ॥
निज बीरा जो चौंरा पावै । इकोतर सौ जीव लोक सिधावै ॥

साखी–यही चरित्र करि आयो, चौंरा के व्यवहार ॥
निज बीरा जो पावै, तब जीव होय उबार ॥

चन्दवारेमें प्राकट्यकी कथा

चौपाई

आसन कर आयो चंदवारा । चंदन शाह तहाँ पगु धारा ॥
बाल रूप धर आयो तहँवा । आठै पहर रह्यो मैं जहँवा ॥

ताकी नारि गई अज्ञाना । रूप देखि ताकर मन माना ॥
ले गये बालक सो निज गेहा । बहुत भांति तिन कीन्ह सनेहा ॥
चंदन साहु देखि रिसियाना । चल गयो नारि तोर अब ज्ञाना ॥
बेग डार बालक को आजू । सुने लोग तो होय अकाजू ॥
जाति कुटुम्ब सुने जो कोई । यह तो भली बात नहिं होई ॥
चेरी हाथ तिन दीन्ह पठाई । उद्यान मास तिन दीन्ह अडाई ॥

नूरीको मिलनेकी कथा

काशीमें प्राकट्य

कछु दिन काया धर दुख पावा । यहि अंतर इक जुलहा आवा ॥
नूरि नाम जो वा संग नारी । देखत बालक भई सुखारी ॥
बालक देख नारि मन भूला । रविके उदय कमल जस फूला ॥
साखी-अति सनेह जिन कीन्हा, नूरी देख रिसान ॥
बालक लीन्हो नारि अब, कहा भयो अज्ञान ॥

बालक वचन-चौपाई

बालक दीन्ह मही महँ डारी । अस सुनि बालक दीन्ह हुँकारी ॥
बूझो काल फांस नर नारी । पूर्व जन्म तेहि लीन्ह उबारी ॥
पाछिलि प्रीति भयी अब मोही । तातैं दरश भयो अब तोही ॥

नूरी वचन

तुम जानो अब मैं नहिं जाना । सो अब मोहि सुनाओ काना ॥

नूरीके पूर्वजन्मकी कथा

कबीर वचन

पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण दूखी । तोरे गृह कबहू नहिं सूखी ॥
श्वपच भक्त मम प्राणन प्यारा । ताको मान पिता अवतारा ॥
श्वपच भक्ति करै पुनि जबही । मात पिता पर लागै तबही ॥

ताकी प्रीति भक्त मन धारा । तातैं भयो विप्र अवतारा ॥
प्रथम प्रीति मोरे मन भावा । तोरे गृह मैं यहि विधि आवा ॥
तोसों कही इक भक्ति हढाई । राखौ मर्म हमार छिपाई ॥
देव सुवर्ण नित्य मैं तोही । एक मुहर पुनि ताकी होई ॥

साखी-बोलो नहिं यहि कारणे, ताहि मुक्ति नहिं भाव ॥
माया देख भुलानो, यहि कारण तब पाव ॥

चौपाई

घर नहिं रहो पुरुष औ नारी । मैं शिव सों अस वचन उचारी ॥
आनि देव लक्ष्मी संसारा । आपन को निज भीख अहारा॥
आन की बार बदत हौ योगू । आपन नार करत हौ भोगू ॥
काशी मरे जन्म नहिं होई । तुव महिमा वर्णै सब कोई ॥
औ पुन तुम सब जग ठग राखा । काशी मरै अजल तुम भाखा ॥
जब शंकर होवे तुव काला । कहां रहे तव भक्त बिचारा ॥
जीवन करत जो होय अकाजा । या शंकर तब तुम कहँ लाजा ॥
सुनि शंकर तब चल्यो लजाई ।यहि अन्तर जुलहिनि चलि आई॥
हे स्वामी मम भिक्षा लीजे । सब अपराध क्षमा प्रभु कीजै ॥
एक पुत्र जो विधि मोहि दीन्हा । कबहूं बात कहे नहिं लीन्हा ॥

शंकर वचन

तोरे गृह पंडित अधिकारी । झूठ बोल कस बोलहु नारी ॥
हरि कमला सम देखो ज्ञाना । बुद्धिवंत तुम पुत्र सुजाना ॥

साखी-सुनकर महिमा पुत्रकी, नारि धरे तब पांव ॥
हे स्वामी मम इच्छा, श्रवणन बचन सुनाव ॥

चौपाई

कहा लजान कहा फिर आवा । बिहँसि कहा तुम सिद्ध कहावा ॥
सुनिकै वहै हर्ष बहु कीन्हा । भिक्षा कनक जाति को दीन्हा ॥

भिक्षा दै प्रमुदित चलि आई । हस्तामल को खोज न पाई ॥
वाचा बन्ध तहाँ पुनि आयो । काल कष्ट मैं तोर मिटायो ॥
सुन जुलहा मन भयो आनंदा । जिमि चकोर पायो निशि चंदा ॥
ले सुत चलै हर्ष मन कीन्हा । तासों पुनि अस बोलेहि लीन्हा ॥
आगिल जन्म जब होइ तुम्हारा । तुम्हैं पठायब यम तैं न्यारा ॥

साखी–सुत काशी को लै चले, लोग देखन तहँ आव ॥
अन्न पानी भक्ष नहिं, जुलहा शोक जनाव ॥

चौपाई

तब जुलहा मन कीन्ह तिवाना । रामानन्द सौं कहि उत्पाना ॥
मैं सुत पायो बड़ गुणवंता । कारण कौन भखै नहिं संता ॥
रामानन्द ध्यान तब धारा । जुलहा सो तब वचन उचारा ॥
पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती । हरि सेवा कीन्हेसि भलि भांती ॥
कछु तुव सेवा हरिकी चूका । तातैं भायो जुलहा को रूपा ॥
प्रीति प्रभू गहि तोरी लीन्हा । तातैं उद्यानमें सुत तोहि दीन्हा ॥

नूरी वचन

हे प्रभु जस कीन्ह्यो तस पायो । आरत हो तुव दर्शन आयो ॥
सो कहिये उपाय गुसाईं । बालक क्षुधावंत कछु खाई ॥
रामानंद अस युक्ति विचारा । तुम सुत कोई ज्ञानी अवतारा ॥
बछिया जाही बैल नहिं लागा । सो ले ठाढै करै तेहि आगा ॥

साखी–दूध चलै तेहि थन तें, दूधहि धरौ छिपाइ ॥
क्षुधावंत जब होवै, ता कहँ देउ खवाइ ॥

चौपाई

जुलहा इक बछिया लै आवा । चल्यो दूत कोउ मर्म न पावा ॥
चल्यो दूत जुलहा हरषाना । राख छिपाइ काहू नहिं जाना ॥
सुन भामिनि आगे चल आवा । सो लै जाइ कोई भेद न पावा ॥

दूध न पीवत नाम कबीरा । खेलत संत संग मत धीरा ॥
तिनसौं कहँ जागौ रे भाई । बिना नाम नहिं काल पराई ॥
कोई न बूझै भेद हमारा । रामानंद पर तब पगु धारा ॥
तब अपने मन कीन्ह उपाई । तिनहि दरश कैसहु नहिं पाई ॥

रामानन्दको गुरु करना

जाहिं रामानंद गंग स्नाना । तेहि मारग में जा पौढाना ॥
तबहि पांव गुरु लाग कबीरू । रामानंद बोल्यो मत धीरू ॥
उठ कबीर तब वचन उचारा । रामानंद है गुरू हमारा ॥

साखी—करहि गोष्ठी शिष्य सब, कोई ज्ञान जीत नहिं जाय ॥
सप्त ऋषि सुधि पाई, गुरु सों बोले आय ॥

चौपाई

विद्या कहे मलेच्छ को दीन्हा । रामानंद क्रोध तब कीन्हा ॥
चले शिष्य तब आज्ञा पाई । कबीर संतको आन बुलाई ॥
सुनतहिं शिष्य चहूं दिशि धाये । हेर खोज कबीरै लाये ॥
आये कबीर लागि नहिं बारा । गुरु मंडलमें आन पगु धारा ॥
अन्तर कपाट शिष्य तब लाया । पूजत रामानंद हरि राया ॥
सुन कबीर आगे चलि आये । गुरुहि आनकर मस्तक नाये ॥
लक्ष्मीनारायण मुकुट सिरनाये । पहिरे वस्त्र माल नहीं समाये ॥
तबहि कबीर वचन अस भाखा । वस्त्र पहिरि माला तुम राखा ॥
अंतर कपाट खोल तब दीन्हा । रामानंद सुन अचरज कीन्हा ॥
दिव्य ज्ञान तुम कहँ केहि दीन्हा । जोर कर गुरुहि विनोदित कीन्हा ॥
कब हम तुम को दिक्षा दीन्हा । नाम हमारा काहे तुम लीन्हा ॥
गुरू हमैं तुम दिक्षा दीन्हा । झूठ बोलका क्या फल चीन्हा ॥

साखी–गुरू जब चलैं नहांने, तब हम दिक्षा पाव ॥
तातैं गुरु कहि थाप्यो, फिर पीछे पछताव

चौपाई

पूज्यो पाहन पंडित धर्मा । पहिल न जानो तुम्हरो मर्मा ॥
मैं तो चाहत मुक्ति पदारथ । तुम पाहिन जापूजे निश्चारथ॥
तब गुरु सुनकै अचरज भयऊ । योग समाधि वैकुंठहि गयऊ ॥
सत्त समाधि विष्णु जब देखा । तापर देश कबीरहि लेखा ॥
जहँ देखा तहां सत कबीरा । झूठ ध्यान भूले मत धीरा ॥
हे कबीर तुम मर्म न जाना । जान मलेछ किया अपमाना ॥
जो कछु आहि मुक्ति सन्देशा । सो सब मोहि कहौ उपदेशा ॥

साहिब कबीर वचन

छोड़ौ सबै मान अभिमाना । तो कह देव मुक्ति फल दाना ॥
शिष्य सखा सौं बात जनाऊ । काल तोर शरणागत आऊ ॥
कहैं कबीर काल है काला । हैं बड़ दारुण काल कराला ॥

साखी–मुक्तिदेव नहिं लेव तुम, रामानंद गुरु देव ॥
भोरहि जन्म गवांय हो, करि पाहन की सेव ॥

सिकन्दर शाहकी बारता–चौपाई

ता निशि को तब भयो प्रभाता । काशी आइ भयी एक बाता ॥
आये सिकन्दर शाह सुल्ताना । है व्याधा बहु भेद न जाना ॥
रामानंद की सुनी बड़ावा । तातैं शाह आप चलि आवा ॥
आये मंडप जहां सुल्ताना । रामानंद तब देख रिसाना ॥
आये शाह सन्मुख भये जबही । रामानंद मुख फेरा तबहीं ॥
वार अनेक तिहितें मुख फेरा । तांकी ओर क्रोध कर हेरा ॥
मारचो खंग परचो खसि धरनी । शाह के अङ्ग अनिलसम बरनी ॥
आये शाह जहां दुःख नसावन । अधिक भई जो देह सतावन ॥

पय औ रुधिर चल्यो गुरु अंगा। पावक उठी शाह के अंगा ॥
तबै शाह ने सुधि अस पाई। महिमा जान कबीर बुलाई ॥
साखी-कबीर दर्शन दीन्हा जबै, तपन भई सब दूर ॥
शाह कहा तुम सांच हो, औ अल्लहका नूर ॥

सिकन्दरवचन-चौपाई

पय औ रुधिर चल्यो गुरु अंगा। शाह कहै यह कौन प्रसंगा ॥

कबीरवचन

जेहि तन मान्यो शब्द हमारा। तेहि तैं चले दूध की धारा ॥
कीन्हा कालउ केर विचारा। आधा अङ्ग रुधिर अनुसारा ॥
अगले जन्म मुक्ति जो होई। अंकूरी जीव कहावै सोई ॥

गौको जिलाना

यहै चरित्र तहां पुनि भयऊ। तब नूरी के मंदिर गयऊ ॥
काजी मुल्ला सबै रहाये। गाय आनि के गलो कटाये ॥
देखि दुखित भये सत्त कबीरू। महा व्याधि गाई की पीरू ॥
केहि कारण गाई जो मारा। सो सब मोहि कहो उपचारा ॥
काजी काया देख विचारी। एकहि ब्रह्म गाय क्यों मारी ॥
गाय जिवावहु मुर्गा साहू। नातर वेद अथर्वन हारू ॥
सत्त शब्द है जासु शरीरू। व्यापी महा गाय की पीरू ॥
साखी-उठिके गाय ठाढ़ी भई, आज्ञा जबही कीन्ह ॥
काजी मुल्ला जानि कै, पाव पकर तब लीन्ह ॥

चौपाई

नगर के लोग अचंभो लागा। यह कबीर कर्त्ता हो जागा ॥

मगध गवन

तब तहँ से पुनि कीन पयाना। उत्तर देश मगध अस्थाना ॥
नूवा नूरी काल बस भयऊ। तिन पुनि जन्म मनुष्यहि लयऊ ॥

राजा बीरसिंह देव बड राऊ । ताके गृह अब धारचो पाऊँ ॥
कमलावती तासु नृप नारी । तिन बड़ सेवा कीन्ह हमारी ॥
ताकौ दीन्ह पान परवाना । तिन कछु भेद हमारा जाना ॥
कह्यो तासों मुक्ति प्रभाऊ । सुनत भयो आनंदित चाऊ ॥
विजुलीखां पठान बड़ ज्ञानी । सन्त जान जिन सेवा ठानी ॥
तासौं कही मुक्ति परभाऊ । ज्ञान गम्य तिन बहुत कराऊ ॥

साखी–अति आधीन जब देखा, ता कहँ दीन्हा नाम ॥
प्रीति जानि के ताकी, कछु दिन किय विश्राम ॥

चौपाई

विजुलीखां कहे पीर हमारे । नृप वीरसिंह शिष्य तुम्हारे ॥
साहिब आप तजो जब देहा । दोइ दीन सो कीन्ह सनेहा ॥
सुनि विहंसि अस आज्ञा ठानी । दोइ दीन से हम निरवानी ॥
हिन्दू तुरक नहीं हो भाई । सुन पठान संशय उपजाई ॥
जो तुम दोइसों न्यारी रीती । मेरे मन कैसे होय प्रतीती ॥
तुम तो हो अल्लह के बन्दा । यह तो अहै आदमी गंदा ॥
तुमहि शरीर तजौगे जबही । शरीर उपाय करों क्या तबही ॥
कै पृथिवी कै देहों जारा । करहु हुक्म सो पीर हमारा ॥
जो कछु होई लोक व्यवहारा । सोई कहो मम पीर पियारा ॥
जो साहिब हुक्म जस करिहौ । मजार तुम्हारा रचिके धरिहौ ॥

साखी–बिहँसि कह्यो तब तिनसैं, मजार करौ सम्हार ॥
हिन्दू तुरक नहीं हौं, ऐसा वचन हमार ॥

चौपाई

दिन कछु गये तासु संबादा । राजा बीरसिंह ने भेजे प्यादा ॥
बन्दीछोर आवैं मम गेहा । रानी विन्ती कीन्ह सनेहा ॥
ताकी प्रीति तहां पगुधारा । दुःखद्वन्द तिन सबै विसारा ॥

तिन पुनि कही सुनो गुरु ज्ञानी । दुतिया ब्याह लगन में ठानी ॥
ब्याह जो होय बिकट अस्थाना । क्या जानै होवै संग्रामा ॥
कोइ घायल कोइ जाई मारा । खाड़ो आही दुहु दिशि धारा॥
ताकी आज्ञा करौ गुसाई । तिनहि देह क्या करो उपाई ॥
के गाड़ौं के जारौं धूरी । यह संशय मेटो प्रभु मोरी ॥
करौ सोई लोक कुल धर्मा । बिन लागै कोई जानै न मर्मा ॥

साखी-जो गाड़ौ तो माटी, जो जारौ तो छार ॥
करो लोककी जो कृति, बोलता ब्रह्म निनार॥

चौपाई

हे स्वामी तुम मोहि बताओ । तुम तन तजो तो काहि कराओ॥
जस प्रभु तस पुन सेवक करई । सेवा युक्ति सदा सो तरई ॥
जो तुम कितहू करहू प्याना । गाड़हि लागे तुमहिं पठाना ॥
हँसै सबै यह देखि परतच्छा । गुरू तुम्हारो आहि मलेच्छा ॥
तस कछु भेद बताओ स्वामी । करो कृपा सो अन्तर्यामी ॥
वास्तव तेही कहो बुझाई । जारौ देह जो क्षार उड़ाई ॥
तातैं लोक मैं नहीं छुड़ाओ । यातें दोइ दीन फरमाओ ॥
गयो नृपति तहँ साज बराती । कौतुक रचो देह तब त्यागी ॥
सुनत साज दल चले पठाना । राना मुर्दा ले बिल खाना ॥
लेकर गाड़ै करै निमाजा । करन बिहांनक दूरी काजा ॥

साखी-रानी भेजे प्यादहीं, तन जब तजो कबीर ॥
आयो बिजुली खान तब, सुनि वृत्तान्त गंभीर ॥

चौपाई

राजा पास पठाओ पाती । सुनतहि क्रोध जरी तब छाती ॥
छाड़्यो ब्याह चले दल साजी । हनें निशान सम्हर की बाजी॥
बाजा गाजी तुरही आवहि । यह बिजुलीखां युक्ति बनावहि॥
ऐसी भांति सो कीन्ह पयाना । रन के आगे बजे निशाना ॥

बांधी अस्त्र अस चले बहु बीरा । कुहुक बान औ बहु धन तीरा ॥
बरछीं सेल औ छुरी कटारी । खड्ग रु तुरी चपल परचारी ॥
दोइ दिशि देख अस्त्र चमकारा । मानो साज चलो जल धारा ॥
राजा कीन्ह मरन का ठाना । वयरख रोप जो रहो पठाना ॥
जब देखा मैं होत लराई । युद्ध जानि अस कन्यो उपाई ॥
रानी जान मोर कछु मर्मा । तिन पुनि कही तजो नृप भर्मा ॥
साखी-पहिले खोदो माटी, मुर्दा देखु निहार ॥
मुरदा नहिं वहि भीतरे, कहा करत हो रार ॥

चौपाई

सत्त कबीर नहीं नर देही । जारै जरत ना गाड़ै गड़ही ॥
पठयो दूत पुनि जहां पठाना । सुनिके खान अचंभौ माना ॥
दोइ दल आइ सलाहा जबही । बने गुरू नहिं भेटे तबही ॥
दोनों देख तबै पछतावा । ऐसे गुरू चीन्ह नहिं पावा ॥
अपने मनैं अचंभा ठाना । रंक माहिं धन गया छिपाना ॥
दोऊ दीन कीन्ह बड़ शोगा । चकित भये सबै पुनि लोगा ॥

रतनाकी कथा

तब अपने मन कीन्ह विचारा । रतना कँदोइन कै पगु धारा ॥
रतना समाधान बहु कीन्हा । राजहि पठय सँदेशा दीन्हा ॥
तुम नृप किमि करते पछताना । निश्चय आही शब्द प्रवाना ॥
रहो सदा शब्दहि मन लाई । दर्शन मोक्ष होय नहिं भाई ॥
साखी-बिजुलीखां सौं दुआ कहि, किमि कारण पछताव ॥
रहो नाम लौ लाइके, जाते कर्म कटाव ॥

चौपाई

लोक वेद मैं ऐसे विचारा । किमि कारण मन दुखी तुम्हारा ॥
सुनै दंडवत बहु विध कीन्हा । तत्व मता नामहि गहि लीन्हा ॥
रतना सों कहि मता अपाना । तेहि सुनिके हरष बहु आना ॥

हे स्वामी मोहि कीजै चेरी। जाते कटै कर्म की बेरी॥
धन्य शब्द धनि जो कछु चहिये। सो सब स्वामी मोसों कहिये॥
सवा सेर मिष्टान लै आवहु। और सवासौ पान मँगावहु॥
इतना चहिये और न काजा। तातै भाग चले यमराजा॥
सोई अंश पान निज लीन्हा। ताको जीव दान मैं दीन्हा॥
अंकूरी जिव भेटे निज गेहा। नूबा नाम जो प्रथम सनेहा॥

साखी-ताको पठयों निज भवन, तीन लोक तें न्यार॥
नूरी के मन इच्छा, धर्मदास अवतार॥

चौपाई

सुन धर्म दास यहै कुल धर्मा। मेटो तीरथ बरत कुल भर्मा॥
कोटि जन्म कीन्हौं तप धर्मा। बिन सत गुरु नहिं मिटिहै भर्मा॥

धर्मदासवचन

हंस राज जो दर्शन दीन्हा। जन्म स्वारथ अधमको कीन्हा॥
हे प्रभु मोरे बन्दी छोरा। हौं आधीन दास मैं तोरा॥
आनहु पान और मिठाई। जितनौ रतना के मन भाई॥
आनहु रतना कहो तुम स्वामी। कृपा करो तुम अन्तर्यामी॥

कबीरवचन

प्रथम हि जो पावै निज बीरा। पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा॥
जाके रहे पुरुष औ नारी। बीरा नाम जीव रखवारी॥
सवा लक्ष जीव नित्त जो मारा। तातैं सवा सेर व्यवहारा॥

साखी-सवा सेर मिष्टान जो, और सवा सौ पान॥
इतना लै जो शिष्य हो, यम तेहि देखि डरान॥

चौपाई

मुहर देखि जैसे घट वारा। जिन्हैं घाट ऊपर बैठारा॥
जो कोइ झूठा रूप बनावै। बिना पान जान नहिं पावै॥

आने फेर परवाना सोई । जैसा अंक मुहर पर होई ॥
इतनी सुन हरषे धर्म दासा । शिरनी पान लाइ धरे पासा ॥
सेत सिंहासन सेतु ई साजा । सेत पान सिर क्षत्र बिराजा ॥
पानै दलतैं सबही कीन्हा । तामें अंक अग्र को दीन्हा ॥
प्रथम हि तिनुका वेग तुरायी । मारग भेद तबै समुझायी ॥
बांएं दाहिने है सहि दानी । इक दिशि धर्म द्वितीय दुर्गदानी ॥
पाछै चित्र गुपित्र को थाना । तेहि तजि हंसा देइ पयाना ॥
टूटै घाट अठासा क्रोरी । हंसा चढ़े नाम की डोरी ॥

साखी-यमसों तिनुका तोरकै, तब दीजौ निजपान ॥
पाई प्रसादै हर्ष तब, शब्द देख मन मान ॥

चौपाई

जाई उबारौ हंस अंकूरा । मन की दिशा देख मन भूला ॥
हे प्रभु कौन शब्द है सारा । तौन शब्द तैं जीव उबारा ॥
एक शब्द पुनि दीन्हा हेरी । यही शब्द तैं जीव उबेरी ॥
जस दरपर लै दीजे हाथा । दर्शन देखै मुख औ माथा ॥
धर्म दास सुनत मन माना । बिकसे कमल उदै जनु भाना ॥
यही वस्तु से जीव उबारा । और ज्ञान है बहुत अपारा ॥
मूल नाम अक्षर धुनि साचा । जेहि तैं जीव काल सों बाचा ॥
आदि नाम पुरुष कर आही । भाग जीव पाव पुनि ताही ॥
धन्य भाग वस्तु जिन पाया । मोकहँ सतगुरु अलख लखाया ॥
अक्षर मूल और सब डाला । डारहि में फल फूल रसाला ॥
किंचित को फल पावै सोई । कहैं कबीर अमर सो होई ॥
अक्षर मूल अमी पँच शाखा । साखी रमैनी ताकी पाता ॥
सुमिरन डार पुहुप है जोगा । तेहि सम आहि ना दूसर भोगा ॥

साखी-अक्षर धुनि लौ लावई, अपराधै परिचय योग ॥
कहैं कबीर संशय गयी, भोगहि मध्ये भोग ॥

चौपाई

भव मैं अक्षर परचै पावै । सत्त गहै सतलोक सिधावै ॥
पुहुपहि से फल उपजै सारा । फल है मुक्ति भोगसे न्यारा ॥
हे प्रभु जो इतना नहिं जाना । सो जिव कैसे लोग पयाना ॥
पंच अमीका सुमिरन दीजे । बंदी छोर ताहि किमि कीजे ॥
औ पुनि ताहि देव जप माला । आवहिं लोकसो भौनहि डाला ॥
निश्चय कहौ पंथ कर भाऊ । दुविधा भाव लखे मत काऊ ॥
कहो पंथ जो पाँजी वाका । धरती शीश स्वर्ग का नाका ॥

साखी-यहि विधि राह चलावहु, सुनहू हो धर्मदास ॥
जीव छुड़ाओ काल सो, सत्त शब्द परकाश ॥

धर्मदास वचन-चौपाई

हे प्रभु मैं कहत डराऊँ । कहों सो एक वस्तु जो पाऊँ ॥
जो नहिं पावहि एती साजा । तासों किमि डरि है यमराजा॥

कबीर वचन

साठ समय बारह चौपाई । एही तत्व हंस घर जाई ॥
पांच अमी महँ एकौ पावै । है परमान सो लोग सिधावै ॥
अथवा जो एकौ नहिं पावै । चार करी तत्त्वन मन लावै ॥
चार करी बूझे मन लाई । यमराजा तेहि देख डराई ॥
अदेख देख तत्त्व मन धरयी । बोलता ब्रह्म सो परिचय करई॥
इनकी देख नाम लौ लावै । डोर गहै सत्य लोक सिधावै ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु जो इतना नहिं जानै । सो जिव कहा करै विश्रामै ॥
नामहि पाइ तत्त्व मन धरई । दुबिधा भाव कबहुँ नहिं करई॥
निर्गुण नाम रहे लव लाई । ताके निकट काल नहिं जाई ॥

साखी-खोजकर सत शब्द का, गहै तत्व मत धीर ॥
निश्चय लोक सिधाइ है, अस कथ कहैं कबीर ॥

धर्मदासवचन-चौपाई

हे प्रभु जा पर दाया होई । पावै वस्तु सार पुनि सोई ॥
अथवा जो ऐती नहिं पावे । हे प्रभु तो कैसी बनि आवै ॥

साहब कबीर वचन

पावे सार जान निज बीरा । निश दिन सुमिरै धन्य कबीरा ॥
जहाँ सुने सतगुरु को नामा । सुने भक्ति छांड़ै सब कामा ॥
सुने जो भक्ति तत्त्व मन लावे । देह छोड़ि सत लोक सिधावै ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु जो इतना नहिं राता । तासौं कैसी कहिये बाता ॥
माया जीव अधिक लपटाना । तातें प्रभु पूछौ इठ ग्याना ॥

साहिव कबीर वचन

धर्मदास मोहि यहि भावे । करही जाप धनी जो पावे ॥
आवे मल्ल तब करें लड़ाई । जाने दाव घात चतुराई ॥
तबही बने कृषी को साजा । कोठी बीज खेत उप राजा ॥

साखी-शूरा बैर भल खोजिये, बीज धरहि को सार ॥
ल्याया बीज न बोइये, ऐसा मता हमार ॥

चौपाई

बिना नाम बहु तन डहकाया । फिर फिर भौजल भटका खाया ॥
जुग जुग जन्म बहुरि भव लीन्हा । होई हित नहिं नाम विहूना ॥
नाम पाय जो तत्त्व न धरई । ते पुनि जन्मै गुरु क्या करई ॥
तत्त्व प्रमाण यही धरमदासा । तातैं मिटै कालकी फाँसा ॥

धर्मदास वचन

बालक कहा तत्त्व को जानैं । मुक्त होय तेहि कौन प्रमानै ॥

साहिब कबीर वचन

बालक नाम कौ दीजै बीरा । पहुँचे लोक जब तजै शरीरा ॥
त्रिया कह सनेह है सारा । उपजै भाव होय जम न्यारा ॥
जातैं नर अचेत अज्ञाना । तातैं तत्त्व नाम परमाना ॥
तत्त्व है मूल और सब साखा । ताकौ नाम जोग मय भाखा ॥
जो नर तत्त्व न राखे ज्ञाना । ताकौ ज्ञान बालक सब जाना ॥
पावै आदि अंत निज बीरा । पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा ॥
छठै मास बीरा निज पावै । है प्रमान सो लोक सिधावै ॥

साखी–तत्त्व मुक्ति है निश्चय, औ बीरा निज सार ॥
माया लीन्ह नर प्राणी, भूल परा संसार ॥

धर्मदास वचन–चौपाई

निसिदिन रह माया लपटाना । सो प्रभु कैसे होय निर्वाना ॥

साहिब कबीर वचन

निस दिन रहै माया बिस्तारा । पलकौ भज तो उतरै पारा ॥
पलकौ नाम चित्त ना धरई । ते पुनि जन्मैं गुरु क्या करई ॥
कर्म निवारन जेहिते होई । परिचय सहज तत्त्व है सोई ॥

धर्मदास वचन

सो मोहि स्वामी प्रगट बताऊ । केहि विधि जोग कर्म समझाऊ ॥

साहिब कबीर वचन

प्रथम सत्य आसन आराधै । निवरी कर्म जो या विधि साधै ॥
काम मारिये अल्प अहारा । जहाँ काम तेहि जोग बिकारा ॥
कोइ कछु कहै हृदय नहिं धरई । निन्दा बिन्दा सब परिहरई ॥
तजै देह जिमि कांचरि सांपा । आलस निद्रा सहज निदापा ॥
दृष्टि न जावै भल औ मंदा । मनहि न आनै संसो नंदा ॥
धोती वस्ती नेती करई । जिमि कामिन सो ग्रहै बहरई ॥

तिनका खेह मंदिर में होई। करई दूर भामिनी सोई ॥
या विधि काया संयम राधै। बांधै मूल अरु नाको साधै ॥

छंद-मूल बांधै नाम साधै काया संयम जानिकै।
मन पवन दोई तुरी साजै युक्ति जीव बनायकै ॥
देह ताडना चित्त कौ तुबक सर छाड़ै आस हो।
तेही आस चढ़ टोरै ममासा जीव होय निकास हो॥

सोरठा-ऐसी बाजी होई, मनके संग दौराइये।
मन शूरा पुनि सो, कष्ट परै पुनि ना टरै ॥

चौपाई

परै कष्ट तब तोरिगे वासा। राखै खड्ग नाम को पासा ॥
नाम अस्त्र ते दूत डराई। भागै अरि शूरा जिमि पाई ॥
अरि के भाजैं होय हुलासा। दुविधा मिटै कमल परगासा ॥
अष्ट कमल देखै पुनि सोई। मानौ रंक महा धन होई ॥
देखै ब्रह्म जहाँ अस्थाना। भय भाजैं तब हो निर्वाना ॥

अष्टकमल वर्णन

अष्ट कमल तोहि भेद बताऊँ। अजपा सोहं प्रगट बुझाऊँ ॥
मूल कमल दल चार ठिकाना।देव गणेश तहां कीन्ह पयाना॥
ऋद्धि सिद्धि बासा तहँ होई। छै सौ जप अजपा तहँ सोई ॥
द्वितीय कमल षटदल परमाना। तहँ कमलन कर आहि ठिकाना॥
सावित्री ब्रह्मा है जँहवां। षट सहस्र जाप है तहँवां ॥

छन्द-त्रय कमल दल अष्ट है हरि लक्ष्मी तिहि संग मौं।
षट सहस्र जहँ होई अजपा निरखि देखो अंग मौं ॥
कमल चौथा द्वादश दल शिव को तहां निवासु हो।
सुरति नरति करि लोक पहुँचै षट सहस्र जहां जासु हो॥

सोरठा-पचयें कमल प्रकाश, तिहिं षोडश दल अहै ॥
आतम जीव निवास, कइ सहस्र अजपा कह्यो ॥

चौपाई

छठवां कमल अहै दल तीनी । सरस्वती तहँ वासा कीनी ॥
दोसौ एक अजपा जहँ होई । बूझे भेद सो बिरला कोई ॥
भौर गुफा दो जल परवाना । सातों कमलको आहि ठिकाना॥
एक सहस्र अजपा परकाशा । तहां बोलता ब्रह्म को वासा ॥
तहां जोग साधे बहु जोगी । इंगला पिंगला सुखमनि भोगी॥
तहां देख असंख्य जो फूला । ब्रह्म थाप काया में भूला ॥
सात कमल जाने सब कोई । अष्टम कमल बिनु मुक्ति न होई ॥
बिनु सतगुरु को भेद बतावै । नाम प्रताप जोग हि आवै ॥
काया तें जो बाहिर होई । भाग जीव पावै पुनि सोई ॥

छन्द-बहु भांति मुनि ऋषि जोग ठान्यो भयो रहित नहिं लेस हो॥
काया थापी सुरति सों सब काग भये नहिं हंस हो ॥
पक्षी होई तब होइ महाबल नाम विना तो काग हो ॥
पक्षी त्यागी जो नाम साधे हंस होय बड़ भाग हो ॥

सोरठा-जोग तो आहि अपार, पक्षी भया पर नयन नहीं ॥
जोग नाम उजियार, नाम तेहि जो पावही ॥

चौपाई

पक्षी भाग नयन जिन पावै । ताके जहां तहां उड़ जावै ॥
देखे लोक जो गुरू बतावै । पक्षी नयन को यहै स्वभावै ॥
अथवा नाम नेक जो पावै । साधे तत्त्व जो लोक सिधावै ॥
नाम नयन पक्षी जो होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥
बाहिर को मैं कहब ठिकाना । सुरति कमल सतगुरु निरवाना॥

छः सौ एक एकसौ बीसा । अजपा ऊपर देखे ईसा ॥
सातदलकमल देवऋषि माना । अष्ट कमल उनहूं नहिं जाना ॥

छन्द–यह भांति अजपा तत्त्वऽराधे बस करे पांचों भूत हो ।
रुनक झुनक बाजे आदि अक्षर दिमंकर बाचे तार हो ॥
षट चक्र बांधे देह में तब जोग मुद्रा सार हो ।
प्रेम को बाजै पखावज प्रति दिना ततकार हो ॥

सोरठा–आतम जीव जो जाय, मुक्ति मुक्ता संग में ॥
तिन सँग ब्रह्म समाय, जिमि जा सरिता सागरैं ॥

चौपाई

सरिता परै सिन्धु महँ जबहीं । दुबिधा भाव न उपजे कबहीं ॥
सरिता संग रहे यक नीरा । भिन्न भाव कथ कहैं कबीरा ॥
दक्षिण नयन जब नेह निहारी । ते समरै बहुतै अधिकारी ॥
चन्दन निकट वृक्ष जो होई । भेद सुबास प्रबल है सोई ॥
संगति का फल ऐसा होई । यह तो भेद जाने जन कोई ॥
चन्दन नाम सुमेर है जोगा । इतनी प्रगट करै जो भोगा ॥
आतम जीव भेद पुनि होई । चन्दन बेल कहै सब कोई ॥
चन्दन कष्ट सब कोई जाना । यहै भेद बिरले पहिचाना ॥

छन्द–जोग सम कछु भोग नाहीं देखु हृदय विचारि कै ।
पांच को बस करो आपने बसै पांच सम्हारि कै ॥
तीन गुण औ नाम चौथा बहुरि इनहि सम्हारिये ।
तब जीतिये निष्कंटका हो प्रति योग यहि विधि साधिये ॥

सोरठा–मेटैं जम को दंड, मुक्ति होय तेहि अटल पुन ॥
विष को करे निकन्द, जोग होय जो नाम फल ॥

चौपाई

संशय मिटे जोग के धारे। मैं अपने मन कीन्ह बिचारे ॥
संशय को खंडन है जोगा। ता सम आहि न दूसर भोगा ॥
जीव को काज जाहितें होई। सोई जतन करो सब कोई ॥
अथवा देह जोग कोई न साधे। तो अब सहज जोग अवराधे ॥
ता में मिल जो यह निस रहई। दुबिधा भाव कबहुँ नहिं करई॥

साखी-पांच तत्त्व गुण तीन हैं, और प्रकृति पच्चीस ॥
चौंतीस ऊपर डेरा करई, नाम तत्त्व इक्कीस ॥

चौपाई

चौंतीस ऊपर डेरा करई। नाम तत्त्व पलक नहिं टरई ॥
ये सब एक नखा मैं राखै। गुरू प्रसाद अमीरस चाखै ॥
सत गुरु दया सम्पुट उघराई। शून्य शहर में बैठे जाई ॥
देखे बोलता ब्रह्म तेहि ठाई। करें हर्ष धर्ष सी जाई ॥
ब्रह्म देखि त्रिकुटी मैं मुक्ता। जीव सीव होय इक जुगता ॥
जीव सीव एकै लख जाना। देह जीव तब देख पयाना ॥
शब्द प्रतीत देख सत लोका। गुरु की दया मिटे सब धोखा॥
अगम अलख सो गुरु समझावै। सुरती निरति से दर्शन पावे ॥
गुरु की दया गम्य जो होई। निश्चय दर्शन पावे सोई ॥
एक बार जो दर्शन पावै। देखै बहुरि विलम्ब न लावै ॥
एकै सुरति निरति जो धारै। सुरति सनेही दीप निहारै ॥
यह निस तत्त्व मता जो धारै। गुरु प्रताप सों लोक सिधारै॥
जाते सहज योग नहिं होई। तातैं आरति साधे लोई ॥
जो मनसा मारे नहिं कोई। तो पुन दासी कर निज सोई॥
जो कोइ काछे सन्त का भेखा। तासों कहिये जोग का लेखा॥

साखी-गेही लीन्हें आरती, संत सोई सो भोग ॥
इडा पिंगला साधिके, सुषमनि राधे जोग ॥

चौपाई

जैसे ग्रेही के मन नेहा। तैसे साधे जोग सनेहा ॥
आसन दृढ पर नारि न जावे। ग्रेही रहै न भेष बनावै ॥
देखी देखा भेष बनावे। राध जोग तो शोभा पावै ॥
भेषै धरै सूरता चाही। कादर भेष की हांसी आही ॥
जाते मन सूरमा नहिं होई। तातैं ग्रेही थाप्यो सोई ॥
ग्रेही में छल मता अपारा। तातें सत्य भक्ति चित धारा ॥
करे जो सेवा सन्त की सोई। आरत भक्त महा फल होई ॥
धन्य सन्त जो आरति साजा। काल जंजाल तेहि घर तैं भाजा॥
आरति समान भक्ति नहीं दूजा। सब ते भली सन्त की पूजा ॥
चरणामृत तासु को लेई। सुरति निरति चरणन चित देई॥

साखी—सन्त आरती जोग मन, करहि गगनमें बास ॥
ग्रेही जोग न जानहीं, कर आरति परकाश ॥

चौपाई

विना जोग मैं होय उबारा। कै नेवर के दीपक बारा ॥
तातैं सहज जोग मैं भाखा। शिरनि पान महातम राखा ॥
आरति तो नानाविधि साजै। पान मिष्टान्न भक्त भय भाजै ॥
जो कछु आहि जोगकर भाऊ। सब भाखौ आरति पर भाऊ ॥
वह देही यह ग्रेही व्यवहारै। काया संजम दै अनुसारै ॥
निशिदिन सुरति निरति बिचारा। तातें मंदिर सेत सम्हारा ॥
पांचौ तत्त्व तीन गुण साधै। तातें मन बिच आरति राधै ॥
इंगला पिंगला सुषमनि वासा। मन बिच कर्म आरत परकाशा ॥
बांधै मूल नाम को साधै। दुबिधा मिटै एक अवराधै ॥
एक घरै कर प्रकृति पचीसा। सोई पुरुष आरति मैं दीसा ॥

साखी—उलट पवन जब आवै, त्रिकुटी भेंट जो होय ॥
गुरु की दाया प्रकट हो, संपुट उघरै सोय ॥

चौपाई

उघरै संपुट गुरु की दाया। नरिअर को देखै परभाया॥
तत्त मूल नरिअर मो जाना। ज्ञानवंत भजि हो निर्वाना॥
अनहद बाजै त्रिकुटी ताला। तातें भक्ति जो होय रिशाला॥
बिन करताल पखावज बाजे। अनहद धुन निस दिन तहँ गाजै॥
अष्ट दल कमल फूल जो फूला। तातें सुमिरन किये समतूला॥
सुन अति जोग छतीसौं रागा। तातें भांति भांति पद जागा॥
जोग करत में देह बिसारै। या संसार में काज सम्हारै॥
जोग समाधि छूटत नहिं देखा। आरत से मिटै कर्म विशेषा॥
प्रतिदिन जो समाधि मन लावै। तातें सदा आरति गावै॥
जोग हीन तत्त नहिं लहई। तातें पान पढोता चहई॥
देखो मन बहुरंग अपारा। तातें पुहुप सेत विस्तारा॥
देह समाधि गंध बहु होई। साधै अग्र प्रबल है सोई॥
चौका सेत हंस भल छाजै। सेत सिंहासन छत्र बिराजै॥

साखी-परचै मैं मन बांधै, करे जोग मन बास॥
संतन आरत जोग मन, दीपक करे प्रकाश॥

चौपाई

मन औ पवन आहिं दो धारा। तातें पवन अनिल घृत जारा॥
जोग जुगत बिन संग न होई। पालै पवन पाहन है सोई॥
गगन बाव गरजै जो जाई। दीप शिखर द्वारै ठहराई॥
ल्यावै जोग अमीरस चाखा। तातें महाप्रसाद जो भाखा॥
धन्य अंकूर जीव है सोई। परिचय जोग करै तन जोई॥
जोग न होय आरती करई। सोई जीव भवसागर तरई॥
मूल नाम और सब शाखा। पुहुप जोग महातम राखा॥
जोगी दृष्टि भाव बहु करई। घट घटमें सुमिरन अनुसरई॥

मूल नाम मुक्ति फल जोगा । ताते नरिअर मिष्टानका भोगा॥
देह बिसार जोग फल चाखा । मन वच कर्म नरिअर सत भाखा॥
उज्ज्वल मंदिर सेत सम्हारा । तेहि रूप साज्यो पनवारा ॥
मुक्ति पदारथ अबेधा हीरा । तेहि पाये कोई गहिर गंभीरा ॥
चंदन काष्ठ सिंहासन चाही । सुमिरण नाम इकोतर आही ॥

साखी-उत्तम पान बडो ना, टूटा भंग न होय ॥
नरिअर चहिये निर्मल, महा मुक्ति फल होय॥

चौपाई

और कछू बात संपत्ति आही । काचा जीव सुन बिचलेताही ॥
ताते सहज बताओ भाऊ । परचै जीवको परम स्वभाऊ ॥
अथवा जो इतना नहिं होई । सहज आरती थापो सोई ॥
सवा सेर आनो मिष्टाना । सत्त सवासो आनो पाना ॥
प्रति पूनौं जो आरति करई । सोई जीव भवसागर तरई ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु पूनों कह अधिकारा । दया करौ दुख भंजन हारा ॥

साहिब कबीर वचन

तुम कह दीन्ह यही दिन पाना । तासौं पूनौं आरति ठाना ॥
अथवा सबई अर्थ नहिं जाना । दोई आरति थाप प्रमाना ॥
छठे मास साजौ निज बीरा । तातें दोई आरती मत धीरा ॥

साखी-जोग आरती फल बड़ा, सत्त बचन परकाश ॥
दुबिधा मेटो निश्चय, सत्तलोक होय वास ॥

चौपाई

सत्तभाव देखहु मति धीरा । लगन साखि देऊ निज बीरा॥
बिना लगन करो मत शिक्षा । जोती खेती जो भल दिक्षा ॥
ऊसरु बीज डारही कोई । निःफल खेती किसान की होई ॥

ऊसर बीज का ऐसा भाऊ। बोवहि बीज अवृथा जाऊ॥
काचे जीवकहँ सुमिरत देई। परिचय जीव तात गहि लेई॥
ता कहँ कैसी करहि जमराजा। देह धरै तो गुरु कहँ लाजा॥
बिना लगन मगन भयो जानो। ऐसो अहै शिष्य सहिदानी॥
पूरा जब शिष्य जो होई। गुरु देव भेद बतावै सोई॥
अथवा जो गुरु अन्तर राख्यौ। गुरुमें धोख सन्त में भाखौ॥
लीक करी औ पंथ बतावै। शोभा अधिक गुरू सों पावै॥
जस बाना तस होवै करनी। ता गुरु सम औरन बरनी॥
सदा लीन नाम जो भाखै। पांच आत्मा अनुरुचि राखै॥
पांचमें करे पच्चीसों नारी। ते बस किये जोग अधिकारी॥
मरत तजो जस कांचरी सांपा। तातें सब को मेटव दापा॥
करो शिष्य जो यहि विधि कोई। पुरइन पान रहैं जनु सोई॥

साखी-जो ऐसी बनि आवै, और बान है सार॥
तातें ग्रही थापो, कडिहारी संसार॥

गुरुवाके लक्षण चौपाई

आप स्वारथी भेष बनावै। मन की दशा ताहि चित लावै॥
तृष्णा जुक्त करे गुरुवाई। जम सों बाचे कौन उपाई॥
निश्चय मानो शब्द हमारा। पर द्रोही कैसा कडिहारा॥
आप अबूझ औरन समझावै। साखी रमैनी झगरो लावै॥
जातें साधु सेवा नहिं आवै। तृष्णा कारण भेष बनावै॥
सिंह न चाहै स्वान सियारा। पैरच बिना कैसे कडिहारा॥
पर नारी औ मन्मथ कर्मा। यह तो भेद काल को मर्मा॥
मारहि मनसा होइ सो होई। नातर नारि करे पुनि लोई॥
ग्रही माहि भक्ति को भेवा। नाम जपै औ साधू सेवा॥
जोपै सहज भाव कडिहारा। शिष्य कियेका क्या अधिकारा॥

ऐही माहि मुक्त फल बासा । सो सब वचन कहौं परकाशा ॥
नाम गहै राखै सत करमा । सब जीव तजै एक पुनि भरमा ॥

साखी–मद रु मांस को त्यागै, और न करै जीव घात ॥
अथवा जो कछु चूकि है, साधु सेव चित राख ॥

चौपाई

करे आरती मन बिच करमा । पर घर तजैजान निज भरमा॥
गृह में जो रहे उदासा । निश्चय सत्त लोक में वासा ॥
जो कोइ यहै अवज्ञा करई । कछु दिन रूपहीन अनुसरई ॥
जो को चूके साधु की सेवा । ताकर फल भाखों कछु भेवा ॥
जाई सो लोक नाम परतापा । तजै देह जिमि कांचरी सांपा॥
देखै जाइ हंसन की पांती । ता मध्ये अस बैठ अजाती ॥
जातें चूक परैं सेवकाई । तातें शोभा हीन लजाई ॥
जो कोइ याकी करे उछेदा । तातें मैं समझाऊं भेदा ॥
गृही तरै सो कौन विशेखा । गुरु को अचरज यौं बड़ देखा॥
गुरू नहीं कोइ यहि भवसागर । सतगुरु आप अजर मनि आगर॥
जाप आहि जो नाम हमारा । तातें नाम धरा कडिहारा ॥
कडिहार लेवै जीवका भारा । तेहि न सूझ किमि उतरै पारा॥

साखी–जैसे महिमा प्रकट है, तैसे सिन्धु का नीर ॥
सरिता सब कडिहार भये, सतगुरु सिन्धु कबीर॥

चौपाई

सरिता माहि बारि जो होई । जीव जन्तु सुख पावै सोई ॥
सरिता लहै पुण्य परमारथ । सत कडिहारी जोग स्वारथ ॥
अथवा नीर अथाह न होई । सहज जोग भाखौं पुनि सोई ॥
नदी में सोइ सदा जो बारी । ऐसी उत्पति आहि हमारी ॥
प्यासा जाय नदी के पासा । बिन पानी सो जाय पियासा॥

प्यासा पानी नदी न पावै । जहँ पानी तहँ तृषा बुझावै ॥
इक जीव ग्रेही आप उबारा । बार नदी नहिं सत कडिहारा ॥
बांधे अस्त्र करे शुग्माई । तिन के त्रास सौं दुर्जन डराई ॥
काछे रहै शूर का साजा । आयो समय कादर हो भाजा ॥
यहि विश्वास रहै जो कोई । स्वारथ पिंड परै जन सोई ॥
परै पिंड तब होवै हांसी । दै विश्वास जीव जो फांसी ॥
चतुरा पहिले करै उपाई । द्रव्य न मिले अनते नहिं जाई ॥
धन मिले का यही उपाई । ग्रेही भाव रचो जो भाई ॥
क्षुधावंत जाके गृह आवै । भले बुरेके असन न जावै ॥
क्षुधावंत जो करही ग्रासा । सन्तुष्ट होय तुरते हो पासा ॥
औ जहां देखे सत्त का वाना । ता कहँ बहुत करे सन्माना ॥
करै साधु सेवा मनराता । ता कहँ मैं बर्णों विख्याता ॥
जस जासूस द्रव्य नहिं पावै । ताके नग्र सैंध दै आवै ॥
चतुरा करै तासु सन्माना । जो पुन ताको करे बखना ॥
ताके पुर का मता बतावै । विवेककी महिमा दरसावै ॥
ताके गेह दरब न चलै जबही । ताकी महिमा दूत करे तबही ॥
बहुविधि महिमा करे जमदूता । तासौं कोई न करे अजगूता ॥
भाजै कादर नगर बधाई । ताके निकट जान नहिं पाई ॥
धन्य सोई जो गेही करई । भल मन्दा को उदर भरई ॥
ता कहँ होई पुन्य परमारथ । नाम गहै जन्मैं होय स्वारथ ॥
कडिहार सोइ जो शूरा होई । भाखों ताहि आपसम सोई ॥

साखी-कडिहारा औ गृही को, कोई न जाने अन्त ॥
बिन परचै विसमाद है, हरषत परचै सन्त ॥

चौपाई

भाषो संयम सत के राऊ । अस गेही जो करै उपाऊ ॥
प्रात नेम जो करै अस्नाना । प्रथम प्रफुल्लित कमलबिगसाना ॥

मद रु मांस कहँ त्यागे दोऊ । मिथ्या जीव घात पुनि सोऊ॥
सत आमन पर निद्रा त्यागी । भली बुरी सैं रहत बिरागी ॥
जाइ जहाँ बर जहँ हितकारी । ऊचट न परई अन्तर भारी ॥
क्षुधावन्त हित कारी होई । अति प्रिय जानसमोवहि सोई॥
यहि सम दूसर व्रत नहिं जाना । ते जन पूनौं आरत ठाना ॥
कहौं जान दासा तन जोई । भागी जीव पावहि निज सोई॥
शिष्य होय जो तन मन वारै । गुरु आज्ञा कबहूं नहिं टारै ॥
गुरु दे शब्द मुक्ति जे होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥

साखी-तन मन गुरु को दीजिये, मुक्ति पदारथ जान ॥
गुरु की सेवा मुक्ति फल, यह गेही सहिदान ॥

गुरु लक्षण-चौपाई

गुरु सोई जो सब ते न्यारा । सो सब मैं भाखौं उपचारा ॥
जल तैं पुरइन का है मूला । पानी पत्र न लागै फूला ॥
जातें देह धरा कडिहारा । तातें चहिये सब उपचारा ॥
जैसे मूल पुरइन को पानी । ऐसेहि दुनियां की सहिदानी ॥
काया धरे सब न कडिहारा । पुरइन भेद तें उतरे पारा ॥
केतो शिष्य करे सनमाना । ते पानी पुरइन सम जाना ॥
इतना सुनै रहै लपटाई । तो वह जग समान है भाई ॥
पुरइन मुक्ति लोक में बासा । गुरुबिन परहि कालकी फांसा ॥
काल बस जीव नहिं तरई । तेहि विश्वास जन्म सोइ धरई॥
कहा सन्त सबहि में भेदा । आप स्वारथी करहिं उच्छेदा ॥

साखी-नहीं सहज सत गुरु वचन, करम कुटिलता ठान ॥
चले लोक गति नरकहूं, सरिता सिंधु समान ॥

लोक गर्व गति राखे भाऊ । ताको देख मास पुनि खाऊ ॥
बहुत यत्न मैं भाव बताया । जो नहिं बूझ अन्त पछिताया ॥

धर्मदास वचन

हे स्वामी तुम सुनो सत भाऊ। जो पूछौं सो मोहि बताऊ ॥
जब तन तजे बोलता ब्रह्मा । किहि विधि जाइ कहो सो मर्मा॥
सो मोहि स्वामी भेद बताऊ । धर्मदास टेके गहि पाऊ ॥

साहिब कबीर–वचन

आवै अंत होय नर जबही । अंतक आनै पठवै तबही ॥
जो जीव नाम तत्त्व मन लावै । ताको अंतक दूत नहिं पावै ॥
नौ द्वारा लग छेकै जाई । दशवों द्वार अब देउ बताई ॥
दसों द्वारन केते न्यारा । भोंर गुफा में सो है तारा ॥
गुरू प्रताप पंथ तेहि जायी । आदि पवन तेहि होत सहायी॥
अरध उरध में पवन का वासा । मूल पवन प्रथम जो भाषा ॥
तेहि पर हंस होय असवारा । पचासी पवन का जो सिरदारा॥
तिहिं चढ हंसा घरको जाई । मान सरोवर जा ठहराई ॥
अंतक दूत करै पछताई । सो सब भेद कहौं समुझाई ॥
भक्षै यहि कारण यम राया । तबहि जीव तोहि समझाया ॥

साखी–काल फांस जेहि बांधै, जो नहिं राधे नाम ॥
तत्त्व हीन जीव व्याकुल, अंतक राखै ग्राम ॥

चौपाई

जो कछु पहिले भेद बताया । सो नहिं करै हते यमराया ॥
छठैं मास बीरा निज होई । सो नहिं होइ करो क्या कोई ॥
किंचित् तत्त्व भाव विधि धारै । गुरु प्रताप ते लोक सिधारै ॥
लोक निकट अंतक जो जाई । होय बलहीन चक्षु ही नाई ॥
तहँवां आहि पंथ का फेरा । एक हमारे इक यमकेरा ॥
गुरु जो प्रथमहिं भेद बतावे । निज घर बैठ हंस सो आवे ॥
आवै शीश ऊपर दै पाऊ । जाय तहां सो कहौं प्रभाऊ ॥
यहि विधि हारे यम कौ दूता । पाँजी रोक धर्म अवधूता ॥

प्रथमहि मान सरोवर जाई । जहवाँ कामिनि राज बनाई ॥
शोभा हीन हिरंमर वारा । तातें अटकै हंस पियारा ॥
हंस द्वीप में पहुँचै जाई । शोभा हीन सो बहुत लजाई ॥

साखी–ते पुनि करै अधीनता, हंस सुजन जन पास ॥
कहा अपराध गुसांई, रूप न होय प्रकाश ॥

चौपाई

जब लग मूल दरश नहिं पावै । शोभा तब लग नाहीं आवै ॥
जब लग शोक भगै नहिं भाई । शोभा तब लग नाहीं आई ॥
एक हंस नहिं शोक भराई । जा नहिं जीव इकोतर जाई ॥
पावै सार जान निज बीरा । पलकहि शोक मरै पुन धीरा ॥
प्रथमहि हेत द्वीप पर जाई । शोभा अधिक तहां पुन पाई ॥
शोभा तस षोडश जस भाना । रवितैं क्षीन हो सलिल समाना ॥
यहवां सूरज कांति प्रकाशा । वहवां जोती स्थिर निवासा ॥
ग्रासै सूरज शशि निम्पाई । वहां न सतावै काल अन्याई ॥
जस कमोदिनि सम्पुट प्रभाऊ । तैसा वहां मैं युक्ति बनाऊ ॥

साखी–जस रविके परभावते, कमोदिनि सम्पुट लाग ॥
ऐसे रवि है निर्मल, पावत तनही जाग ॥

रविके उदय जस मिले चकेवा । हंसा हंस मिलै जस भेवा ॥
रैन तज तब देही त्यागा । पहुँचे लोक हंस मिल जागा ॥
मिल जस चकई चकवा कम्ही । हंसा हंस भाव तस धरही ॥
रविके उदय कमल जस फूला । हंस कमल सूरज रवि तूला ॥
रविके उदय तिमिर जस भागा । हर्षहि धर्म हंस मन जागा ॥
सरल गरल तें अन्तर जानी । धर्मराय अपने मन आनी ॥
काया शोभा उडुगन बांती । अस बूझै चिकुरन की क्रांती ॥
सो पुनि चिकुर आहि उजियारा । अस शोभा है हंस पियारा ॥
रजनी मुदित दिवस जो भएऊ । ज्योति अटल तस हंसा गएऊ ॥

साखी–नयन दोई भल छाजै, मानौ शशिकी ज्योति ॥
शशि स्वभाव सो देखिये, ऐसी शोभा होति ॥

चौपाई

वरण तासु चक्षू शोभाई । फूटी चंद दो दिशा समाई ॥
नयन दामिनी होत झलहाला । पाछे नहिं अनिल उजियाला ॥
बादल घन विजुली चमकाई । शोभा मानों तेज लजाई ॥
श्रवण सोहैं मनौ रवि के चाका । शोभा अधिक सु जाऊ थाका ॥
शोभा कण्ठ जैसे गिरि देवा । नाक कीन्ह सिष्ट जनु देवा ॥
शोभित कहे मिरनाल सरोजा । मुख जो कमल मिरनार कुरोजा ॥
है मिरनाल जनु सेतहि भाऊ । वदन प्रकाश शोभा बहु पाऊ ॥
विगसत कमल उदित जिमि तरणी । हंस पदम दीपक जस वरणी ॥
काया तासू कदली नेहा । रोम रोम मुक्ता को रेहा ॥

धर्मदास वचन

हे स्वामी मैं पूछौं भाऊ । जो पूछौं सो मोहि बताऊ ॥
अन बेधा जस देखियत हीरा । रोमत होवे हंस शरीरा ॥

साहिब कवीर वचन

साखी–जँघ पिंडुरी पग अँगुष्ठा, शोभा अधिक अपार ॥
शब्द रूप कारीगर, रवि शशि अनि जन ढार ॥

चौपाई

नख शोभा किमि करौं बखाना । जातैं हंसन कौ उतपाना ॥
नख न होय जैसे नख हीरा । अंगुरी बाद बरन चँद चीरा ॥
हथली सोहै मनु पूरण चंदा । अँगुरिन पांति शोभा अरबिंदा ॥
जस क्रांती शोभा बहु भांती । छाजै तहाँ नखन की पांती ॥
एही सबै है रूप पर भाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥
सो सब शोभा भाव बताऊ । अगम उपेक्षा सबहि बताऊ ॥
जाते भयो मानो अधिकारा । तातैं कहौं रूप व्यवहारा ॥
जस अकाश महँ ऊगहि सूरा । हो उजियारा सो तिनहू पूरा ॥

पाइर द्वीप होई बड़ चोखा । परमारथ सो करत बड़ तोषा ॥
रविगण पुरुष लगन जो लोका । उड़ गये हंस मिटा सब धोखा ॥
दीप सार औ करी सम्हारी । तेज वरना चन्दा अधिकारी ॥
साखी–तीनौं पुर उजियार भयो, ऊगे भानु अकाश ॥
तैसे पुर की ज्योति में, हंस जो करै प्रकाश ॥

चौपाई

एक सूर्य का किंचित भाऊ । जाग उपेक्षा भाव बताऊ ॥
हंस सुजन हंस के राजा । पल पल हंस दंडवत छाजा ॥
एतिक हेत द्वीप उजियारा । बैठे सब जहँ हंस पियारा ॥
ते पुन हंस दंडवत करही । क्षण क्षण माथ चरन तर धरही ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु हेत द्वीप सुख पाया । अग्र द्वीप ताहि करी दाया ॥

साहिब कबीर वचन

हंस सुसज्जन दंडवत काहीं । पुरुष सौं फिर विनती अनुसरहीं ॥
जोग सन्तायन हंस लै आवहु । हेत द्वीप तिन को बैठावहु ॥
देखा चाहे चरण जौ द्वीपा । मंजुल मंगल करी समीपा ॥
आज्ञा पाय चले हैं हंसा । चरणा द्वीप पहुँचे निःशंसा ॥
अभय पक्ष हंस तहँ आवहि । जोग संतायन भाव बतावहि ॥
जिहितें आहि आदि परवाना । पावै हंस तब करहि पयाना ॥
हंस राज तब मौन होय जाई । आवै हंस बहुत तेहि ठाईं ॥
साखी–सहस्र अठासी पालंग, और सहस से तीन ॥
इतने हंस तब आवैं, यह अस्थिर कहँ चीन्ह ॥
पहिले बन्दौं गुरु चरण, सुरति संतायन योग ॥
बन्दौं हंस सुजन जन, तिन प्रसाद यह भोग ॥

चौपाई

धन्य पुरुष जिन परिमल छाया । हंसन सुख बहुतै मन भाया ॥
तब हंसा बहुते हर्षाना । प्रथम हंस सुजन जन ज्ञाना ॥

सुरति सनेही गुरु की दाया । हंस सुख बहुते मन भाया ॥
पुहुप द्वीप ताको विस्तारा । चार करी केता उजियारा ॥
प्रथमहि महिमा जोत विस्तारा । बैठे जिन कहँ जोत अपारा ॥
नौसै संख औ तेरा करोरी । एतिक महिमा द्वीपहि केरी ॥
ता भीतर करी कस देखा । महिमा फल जस रवि को रेखा ॥
अस जनि जानो रवि को भाऊ । उतपक्षा सब भाव बताऊ ॥
अम्बू करी बहुते उजियारा । धन्य पुरुष जिन शब्द उचारा ॥

साखी-इतना भाव सुख उपजै, अम्बुकरी महँ जाय ॥
नाम तत्त्व जो राधे, सो अस्थिर बैठे आय ॥

चौपाई

शुभ करी किम करौं प्रवाना । जातें कूर्म्म काल उतपाना ॥
पक्षि पालना द्वीप बत्तीसा । तापर रूप सूर्य पच्चीसा ॥
इक दिन मनो सूर्य की पांती । दुबिधा भाव न रूप की क्रांती ॥
बरणों सूरज ज्योति अपारा । सोहै अटल रूप उजियारा ॥
औ सब शुभ्र करी को भाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥
सिन्धू मध्य मेघ जस भरई । पुरुष शब्द ज्योति अनुसरई ॥
जस जीव रहै विषय की आशा । शब्द पुरुष सत करे निवासा ॥
प्रथम करी का मर्म न जाना । सो पुनि कैसे जाइ ठिकाना ॥
दूसर द्वीप मम महा सुरंगा । परम हंस बैठे तिन संगा ॥
तीसर द्वीप जोगा जहँ रहई । ताहि द्वीप का मरम ना लहई ॥
आदि द्वीप पुरुष अस्थाना । तहां हिरंमर सुख कर थाना ॥

साखी-पक्षि पालना द्वीप बड़, जामें ज्योति सुरंग ॥
नाम तत्त्व जो राधे, तो मेटे दुख द्वन्द ॥

चौपाई

मूल द्वीप मूल नाम उचारा । तातें अग्र बीरा निज सारा ॥
मूल अग्र बीरा निज पावै । इकोतर सौ जीव लोक सिधावै ॥
शोक भेर काया नहिं छाजा । शोभा हीन हंस होय लाजा ॥

ते पुन करे बहुत पछितावा । सुजन हंस सौं बिन्ती लावा ॥
हंस सुजन जन कहैं अस बानी । शब्द हमार सुनों हो ज्ञानी ॥
जातें जीव काल बस रहई । पुरुष शब्द जो नाहीं गहई ॥
एक निमिष हंसा कर होई । पुरुष सेज तेहि होवै सोई ॥
सोई हंसा तन मन धरई । परम पुरुष सों परिचय करई ॥
परम द्वीप शोभा बहु होई । सब विस्तार कहौं अब सोई ॥
तहां बिराजै जस पुन कमला । उडुगन सूर सनेह जनु जवला ॥

साखी-रत्न पदारथ थाका, पदम अनूप सुरंग ॥
उदित अवास बहुरि जितै, बिगसत सूर औ चंद ॥

चौपाई

जग मग ज्योति हंस शिर सोहै । ललित मौन रतनन जनु मोहै ॥
हंस के सीस छत्र जो धारा । पुरुष बानी तैं होय उजियारा ॥
मिटै तिमिर उदय जनु भाना । हिरंमर भांति सब रूप प्रवाना ॥
सबै रूप जस भये चकेवा । हंसा हंस मिलै तस भेवा ॥
प्रथम हंस बैठे तहं रहई । सो पुनि भक्ति परम पद करई ॥
बहु दिन रहे नर्क की खानी । धन्य गुरू हंसा कियो पयानी ॥
बैठे हंस सबै इक पांती । मेटो दुख जब भये अजाती ॥
संशय सबै पिछली गएऊ । रंक महानिधि मानो लहेऊ ॥
पुहुप द्वीप महँ बैठे जाई । अमृत फलै जहां मिल पाई ॥
मंगल करी देख जब जाई । देखत शोभा बहुत लुभाई ॥
मेघ महल सो है ब्रह्मंडा । तहँ तस सँग रहै अरबिन्दा ॥
जहँ लग मेघ बुन्द ढरकाई । तैसे कमल तहाँ बिगसाई ॥

साखी-पुरुष आप जस स्वाती, भरै मेघ शब्द झनकार ॥
जल सब भरो जो पोखरी, सोभा भूमि निनार ॥

चौपाई

बुन्द निरंकार बरषावै । शून्य शिखर तब शोभा पावै ॥
करो स्वाति तहँ अमृत आही । प्रथम हंस देखै पुनि ताही ॥

तिन पुनि ध्यान पुरुषसौं धारा । बिगस्यो पुहुप बाणी उच्चारा ॥
फल अमृत तब टूटे चारी । तिहितें फल अनेक विस्तारी ॥
जेते हंस दर्शन को आये । एक एक सब हंसन पाये ॥
आज्ञा मांगि हंस सब पाया । तबते भई अमर की काया ॥
आस प्यास सब हंस अघाना । निर्वृति सुधा सो क्षुधा बुझाना ॥
निवृति करी किम करव बखाना । उदित भये जनु अगनित भाना ॥
पालंग कोटि तीन कौ फेरा । निवृति करी इतनौ बिस्तेरा ॥

साखी हंस आवै बहु व्याकुल, बहुत करै पछिताव ॥
दयावंत प्रभु महिमा, मृतक दरस दिखराव ॥

चौपाई

प्रगट रूप देख्या पुन कैसा । जल बिलग गगन तासु रवि जैसा ॥
हंस सबै तब दर्शन पावा । भया हरष मिटा पछितावा ॥
हंस सबै तब भये अधीना । उडुगन माही शशिकौ चीन्हा ॥
अस जिन जानेउ शशिका भाऊ । उत पक्षा सबई भाव बताऊ ॥
चातक निस दिन बारि निहारै । पावै जल तब तृषा बिसारै ॥
पुरुष दर्श स्वाती कौ पानी । देखि रूप सो तृषा बुझानी ॥
पदमै संपुट लागा जबहीं । हंसा परम रूप भयो तबहीं ॥
निज अस्थाने हंस न तब जाहीं । हंस द्वीप तहवां ठहराहीं ॥
एकहि जात रूप सब माहीं । दुविधा भाव सो देखत नाहीं ॥
ता भीतर पुहुपन की सेजा । पंकज बीज आहि जनु लेजा ॥
अभै दीप ज्ञानी कौ वासा । तहँवां हंस करहिं सुख रासा ॥
पालंग तीन सोहै पुन द्वीपा । तहाँ पुरुष रहै अधर समीपा ॥
पुहुप द्वीप बिगसो पुनि गुंजा । गुंज मनौ शशि भानु अलुंजा ॥
भये पग स्थिर हंस सुखारी । पुहुप द्वीप सिरजै छत्रधारी ॥
हंसा तब पग अस्थिर आये । अमर चीर शोभा बहु पाये ॥
मान सरोवर बहु नौनाई । शोभा रूप राशि बहु ताई ॥

सुरति सागर डोर समोई। मुक्ति द्वार तहाँ सौं गोई॥
सो द्वारा जो गुरू बतावै। मानसरोवर तैं चलि आवै॥
तहाँ हंस शीलका थाना। माणिक मध्य दीप निर्वाना॥
चौरासी लक्ष द्वीप को फेरा। आवे हंस तहँ कीन्हो डेरा॥
तहाँ है पुनि कामिनि राजा। जग मग ज्योति तहाँ पुनि छाजा॥
बरणो शीश रूप भल आही। चार भानु जानौ तिहि पाही॥

छन्द-शीश झलक बहु बरणा पांती रूप शोभा राशि हो।
नौ लाख उडुगन पोह राखै भानु शसिको भासि हो॥
जग मगा चीकुर अतिहि सोहै राजै जैसे पुर सही।
अटल जेहि रूप बरनौ शशि बरणा काया कही॥

सोरठा-शशि औ भानु निचोर, शोभा राखी शीश पर॥
सेत वरणा अंजोर, मान सरोवर कामिनी॥

चौपाई

भले नेत्र दरसन कस देखा। मानहु अर्कहिं सुठार बिशेखा॥
शब्द कारीगर रूप चम कारा। शशि अनेक ताही जनु ढारा॥
श्रवण गातु शोभा अधिकाई। जैसे छीर कै काढ मलाई॥
छीर भरो जनु शशि औ भाना। माखन रूप कामिनी ठाना॥
मौज अनेक ताके तन चीरा। लागे रवि शशि अगनित हीरा॥
चमके रूप ज्योति बहु भाऊ। सब उजियार पुरुषसे आऊ॥

साखी-शोभा बहुते कामिनी, नख शिख सुन्दर रूप॥
बैठे माना भाव धरि, चन्द्रभानु बहु यूप॥

चौपाई

सर शब्द पावै जो ताई। ताके बल हंसा घर जाई॥
इतना रूप कामिनी अंगा। नहिं उपजै तहँ भाव अनंगा॥
बैठे रहई हंस सुख पावई। दृष्टि भाव परम मन भावई॥
ऐसी भक्ति नहिं महि माहीं। पटतर बनै देत नहिं ताहीं॥
जस पाहन मंजुमें डारा। देखौ शोभा अगम अपारा॥

महल पंच भूत तहँ नाहीं । हंसा बैठे सुख करे ताहीं ॥
अग्र रुचिर छत्र सिर छाजा । हंसा लहत बहुत सुख साजा ॥
जाय दिव्य तहँ करहिं निवासा । विमल अंग शोभा बहु पासा ॥
मिटै भ्रम तब परिचय पाई । जहां रहै तहवां ठकुराई ॥
साखी—करहीं हंस सुख अस्थिर, अम्बू करी अस्थान ॥
देखौ द्वीप सो पावन, कमल करी निर्बान ॥

चौपाई

धन्य जीव पुरुष शब्द उचारा । जाते शोभा अगम अपारा ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु सुन्यो हंस कर भेऊ । जो कछु पूछौं सो कहि देऊ ॥
जो कछु होय आगे व्यवहारा । आगे होय सो कहो विचारा ॥

साहेब कबीर वचन

सुनु धर्मदास मैं कहौं बुझाई । आगे जस करि है अन्याई ॥
वंश व्यालीस अचल तुम्हारा । नाद बहुत है विंद बिचारा ॥
तेही पाछे चरित अस होई । कहौं प्रगट नहिं राखौं गोई ॥
अग्नि कौन अचिन्तपुर गाऊँ । तहां कौ वरणन तुमहि सुनाऊँ ॥
भ्रमत नयन विकट है काया । नाम चक्ररथी काल स्वभाया ॥
मानै जीव सो कहो विचारा । जस रविकोट है मृत्यु है सारा ॥
ताहि नग्र की राज कुवाँरी । सोभा चहै सहित जनु नारी ॥
ताकौ भेद मैं कहौं बुझाई । घर कुम्हार के जन्मे आई ॥
जनमत तात जननी कहँ खाई । दृष्टि परत इतन होइ जाई ॥
जस पावक महँ तृनै समाई । वहिनी खाय जो देखन आई ॥
अग्नि समान चक्ररथी भाई । तृण समान मलेछ अधिकाई ॥
बत्तिस अंगुल तासु शरीरा । कही अगम अस दास कबीरा ॥
श्रवण एक नौ अंगुल ताही । डेढ नाक दो जिभ्या जाही ॥
यही स्वरूप विश्व कहँ ढावै । तेहि अन्तर रानी चलि आवै ॥
रानी दृष्टि परे तेहि पाहीं । भाजे गज केहरि की छांहीं ॥

तैसई भाजै अंतक दूता। वंश तुम्हार थकै अजगूता ॥
मिटहि पंथ धर्मदास तुम्हारा। काल चरित्रै करै अपारा ॥

धर्मदास वचन

हे सतगुरु सो पुनि बतावहु। चक्ररथी को भाव बुझावहु ॥
जब दिखराय काल कौ भाऊ। धर्मदास मन त्रास जनाऊ ॥
साखी-बहुत त्रास जब कीन्हें, भये व्याकुल मति भंग ॥
चक्ररथी को भाव बतायो, कह्यो वचन परसंग ॥

साहिब कबीर वचन-चौपाई

अबही भाव दूर है ताही। जनि डरो त्रास वज्र जिव चाही ॥
दृढ़ता जान करौ गुरुवाई। जातैं जीव लोक कहँ जाई ॥
जीवको बन्ध छुड़ावहु यम ते। हंस मुक्तावहु नाम जतन ते ॥
साखी-नाम जतन जो करै, ताकर होइ न हानि ॥
ज्ञान सागर सुख आगर, कहे कबीर बखानि ॥

सत्य विचार-चौपाई

ज्ञान सागर ग्रन्थ को भाऊ। समझि बूझि के पारख लाऊ ॥
अनन्त प्रकार के शब्द पसारा। विनु पारख नहीं होय उबारा ॥
शब्द परख की युगती आही। गुरु मुख कहा रमैनी माही ॥
रमैनी सताईस तेहिको जानू। बूझि विचारके हिरदय आनू ॥
पारख करनकी युक्ति जब जानो। सांच झूठ की परीक्षा आनो ॥
काल दयालको स्वरूप पिछानो। काल सन्धि झाई मन जानो ॥
सार शब्द का पाओ लेखो। उभय आनंद तबहीं तुम देखो ॥
करु पारख तब बन्धन छूटै। बिनु पारख जमै धरि कूटै ॥

इति श्रीज्ञानसागर समाप्त ॥